वर्ष : ९
अंक : ७२
दिसम्बर १९९८

हिन्दी

पलकें हिलाये बिना एकटक निहारने से जीवन-शक्ति का विकास होता है।

वर्ष : ९
अंक : ७२
९ दिसम्बर १९९८

सम्पादक : क. रा. पटेल
प्रे. खो. मकवाणा

मूल्य : रू. ६-००

**सदस्यता शुल्क**

**भारत, नेपाल व भूटान में**

(१) वार्षिक : रू. ५०/-
(२) पंचवार्षिक : रू. २००/-
(३) आजीवन : रू. ५००/-

**विदेशों में**

(१) वार्षिक : US $ 30
(२) पंचवार्षिक : US $ 120
(३) आजीवन : US $ 300

कार्यालय
**'ऋषि प्रसाद'**
श्री योग वेदान्त सेवा समिति
संत श्री आसारामजी आश्रम
साबरमती, अमदावाद-३८०००५.
फोन : (०७९) ७५०५०१०, ७५०५०११.

प्रकाशक और मुद्रक : क. रा. पटेल
श्री योग वेदान्त सेवा समिति,
संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा, साबरमती, अमदावाद-३८०००५ ने पारिजात प्रिन्टरी, राणीप, अमदावाद एवं पूर्वी प्रिन्टर्स, राजकोट में छपाकर प्रकाशित किया।



## इस अंक में



**पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग**
**SONY चैनल पर 'ऋषि प्रसाद' रोज सुबह ७.३० से ८.**

**आश्रम विषयक जानकारी**
**Internet पर उपलब्ध है : www.ashram.org**

*'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्रव्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक एवं स्थायी सदस्य क्रमांक अवश्य बतायें।*

## आशा का नवल संचार हो

ऐ मेरे गुरुदेव तुम तो, मंत्र में ॐकार हो।
तुम ही ब्रह्मा तुम ही विष्णु, तुम ही शिव साकार हो ॥
मंत्र जप पूजा तुम्हीं, तीरथ तुम्हीं गीता तुम्हीं।
वेद रामायण तुम्हीं, तुम भागवत का सार हो ॥
माँ की ममता नैन में, वाणी पिता जैसी तुम्हारी।
रूप ईश्वर-सा तुम्हारा, देते गुरु का प्यार हो ॥
ज्ञानोदय कर अज्ञान हर, भक्ति को पोषित करते हो।
तुम ही कर्त्ता तुम ही हर्त्ता, तुम ही पालनहार हो ॥
'आस' जगाते हो हृदय में, 'राम' के दीदार की।
बापू आसाराम आशा का नवल संचार हो ॥

*- ऋतु 'सुकुमार'*

*

## गुरुजी मुझे ज्ञान मेरा कराते

हमें सत्य के मार्ग पर हैं चलाते।
गुरुजी मुझे ज्ञान मेरा कराते ॥

चरैवेति जीवन चरैवेति जीवन।
जप योग तप त्याग में ही है भगवान।
सदाशिव का हमको भजन हैं सुनाते ॥

हम ही ज्ञान बल हैं, हम ही शब्द बल हैं।
हम ही ब्रह्म के अंश, चल हैं अचल हैं।
हम ही विश्व की शक्ति ये हैं जताते ॥

सभी देव तन में हैं, मन में समाये।
जो उपकार करता, वही जान पाये।
दुःखों का हरण कर, सुखी हैं बनाते ॥

है क्या खुद का जीवन ? परमार्थ है क्या ?
है क्या वर्ण आश्रम ? पुरुषार्थ है क्या ?
समन्वय करें कैसे, ये हैं सुझाते ॥

गुरुजी के चरणों में, मुक्ति है रहती।
गुरुजी की सेवा में, भक्ति मचलती।
परम शांति आनन्द, हमको दिलाते ॥

*- सतीशचन्द्र सिंह*

*

## राम रस हृदय में घोलते चलो

हरि ॐ हरि ॐ बोलते चलो।
राम रस हृदय में घोलते चलो ॥

पियो राम नाम रस प्याला, प्रभु-प्रेम में हो मतवाला।
यह तन है एक शिवाला, बसा घट में है दीन दयाला ॥
दिल के द्वार अब खोलते चलो...

बनो ईश्वर के दीवाने, हरि ध्यान में हो मस्ताने।
छोड़ो झूठे जगत के फसाने, छेड़ो ॐ शिवोऽहं तराने ॥
प्रभु मस्ती में डोलते चलो...

गुरुज्ञान की शमां जगा ले, दिले दिलबर को रिझा ले।
निज अंतर गोता लगा ले, कर जीवन उसके हवाले ॥
मधुर वचन नित बोलते चलो...

हर साँस में हरि बसा लो, भय भेद भरम भगा दो।
प्रभुप्रीति का रंग चढ़ा लो 'साक्षी' आत्मज्योति जगा लो ॥
नाता अलख से जोड़ते चलो...

*- जानकी ए. चंदनानी*

---

सुखद अवस्था आये चाहे दुःखद अवस्था आये, उसे भगवान की भेजी हुई मानकर बीतने दो, गुजरने दो। तुम अपने दिल को विह्वल मत करो वरन् साक्षीभाव से देखते रहो।

सुख आए तो चिपकना क्यों ? दुःख आए तो डरना क्यों ?
तेरे साथ तो परमेश्वर है... इस समझ को खोना क्यों ?

# आत्म प्रसाद

## ज्ञानी : कार्य-कारण से परे

*- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू*

**भोजन छाजन नीर की चिंता करे सो मूढ़।**

भोजन, छाजन, नीर अर्थात् अन्न, जल, वस्त्र और आवास की चिंता मूढ़ लोग करते हैं। वास्तविक ज्ञान से रहित लोग रोटी पाने के लिए सारा जीवन गँवा देते हैं। वे सचमुच में बड़े अभागे हैं। खाने-पीने और कपड़े-मकान के पीछे ही वे दौड़ते रहते हैं। जिस नश्वर शरीर को अग्नि में जला देना है, उस शरीर के लिए सारी जिंदगी यूँ ही व्यर्थ में खो देनेवाले को शास्त्र में मूढ़ कहा गया है। 'मेरी इज्जत... मेरी आबरू... मेरा धन्धा... मेरा रोजगार...' इन मन्द विचारों में फँसकर मूढ़ मनुष्य कर्म की जाल बुनता रहता है और खुद ही उसमें फँस जाता है। इस प्रकार मनुष्य जन्म में मुक्त हो जाने के बजाय मानव को ८४ लाख जन्म-मरण के चक्कर खाने पड़ते हैं।

आत्मविचार के अभाव में मनुष्य भौतिक पदार्थ पाने के पीछे पड़ता है, फिर भी तृप्त नहीं होता है। पहले के जमाने में जब लोग आत्मचिंतन करते थे, तब कमानेवाला एक और खानेवाले दस थे, फिर भी संतुष्ट रहते थे। आज जब आत्मचिंतन मृतप्रायः हो गया है और घर के सब लोग मिलकर कमाते हैं, तब भी उनका अभाव नहीं मिटता। आत्मविचार में मन लग जाए तो फिर मजदूरी करने की क्या आवश्यकता ? भगवान में मन नहीं लगता है तभी रोटी पाने के लिए मजदूरी करने की आवश्यकता होती है। आत्मज्ञान-प्राप्त महापुरुषों के लिए सूखी रोटी क्या और खीर-पूड़ी क्या ? उनके लिये महल में रहना और झोंपड़ी में रहना दोनों समान है। शरीर उनका चाहे कहीं भी रहे, वे खुद तो आत्मपद में प्रतिष्ठित होते हैं। फिर वे इस नश्वर देह की चिंता भला क्यों करें ?

**भोजन छाजन नीर की चिंता करे सो मूढ़।**
**ज्ञानी चिंता ना करे, निज पद में आरूढ़॥**

अपने निज पद में आरूढ़ ज्ञानी को चिंता किस बात की ?

**निज पद में आरूढ़ चिंता करे तो कैसी ?**
**खुशी है ता में प्राप्त अवस्था जैसी॥**

प्रारब्धानुसार जो भी मिले, उसे ब्रह्मज्ञानी स्वीकार कर लेते हैं। प्रथम हमारा खाने-पीने का प्रारब्ध बना, बाद में शरीर मिला। यदि प्रारब्ध में भोग लिखे हैं तो घोर जंगल में जाकर बैठो, फिर भी वहाँ भोग पीछे-पीछे आएँगे और खाने में छप्पन प्रकार के भोग पड़े हों, परंतु प्रारब्ध में भोगना नहीं होगा तो ऐसा रोग लगेगा कि खाना दुश्वार हो जाएगा। अज्ञानी, मूढ़ मनुष्य थोड़ी-सी असुविधा से झुँझला उठता है परंतु ज्ञानी महापुरुष सदा अचल रहते हैं। जैसे सुमेरु पर्वत वायु से चलायमान नहीं होता, वैसे ही ज्ञानी दुःख से चलायमान नहीं होते। ऐसे ज्ञानवान पुरुषों में कोई फूलों के वन में विचरते दिखेंगे तो कोई गिरि-गुफा में समाधि अवस्था में रहते दिखेंगे। कोई नगर-नगर घूमते, तो कोई गृहस्थी बनकर गृहस्थाश्रम में रहते दिखेंगे लेकिन ज्ञानवान को इन सब अवस्थाओं में तनिक भी फर्क नहीं पड़ता। ज्ञानी को यह जगत स्वप्नवत् दिखता है, इसलिए जगत के व्यवहार में ज्ञानी की सत्यबुद्धि नहीं होती। ऐसा नहीं है कि ज्ञानवान को जीवन में दुःख भुगतना नहीं पड़ता वरन् दुःख भुगतने की दृष्टि में परिवर्तन आ जाता है। भगवान श्रीरामचंद्रजी को भी १४ साल वनवास मिला था और भगवान श्रीकृष्ण जिनके साथ थे, ऐसे पांडवों को तथा द्रौपदी को भी दुःख सहना पड़ा था। सुख-दुःख तो अज्ञानी और ज्ञानी दोनों के जीवन में आते-जाते रहते हैं, परंतु ज्ञान प्राप्त

करने का फल यह है कि ज्ञानवान को सुख-दुःख में सम रहने की समझ आ जाती है। ज्ञानी समझेंगे कि अगर दुःख आया है तो भी वह गुजरनेवाला है और सुख आया तो भी वह गुजरनेवाला है। अपने प्रारब्ध के अनुसार उन्हें जिस समय जो मिलेगा, उसमें उन्हें कोई शिकायत नहीं होगी।

श्रीरामकृष्ण परमहंस को गले का कैन्सर हुआ तो नरेन्द्र ने उनसे कहा :

''आपको तो माँ काली रोज दर्शन देने आती हैं। आप उनके साथ घंटों बातें करते हैं। फिर आप इतना क्यों सहते हैं ? आप माँ से अपनी बीमारी की बात क्यों नहीं करते ? माँ आपको बीमारी से अवश्य मुक्त कर देंगी।''

तब रामकृष्ण मुस्कुराये और बोले :

''इस क्षणभंगुर शरीर के लिए माँ को क्यों परेशान करना ? शरीर का प्रारब्ध है भुगतना, तो यह भी बीत जाएगा। मैं तो निर्मल निरोग आत्मा हूँ। इस नश्वर देह का जैसा प्रारब्ध होगा, वैसा यह भुगतेगा।''

ज्ञानी के व्यवहार से उन्हें कभी भी पहचाना नहीं जा सकता। ज्ञानी का व्यवहार अज्ञानी जैसा भी हो सकता है। अपने प्रारब्धानुसार जीवनयापन करते हुए ज्ञानी को बाह्य व्यवहार द्वारा मापना मूर्खता है। इसीलिए कहते हैं कि ज्ञानवानों के बारे में बिना समझे बोलना महा पाप है, अतः मौन रखना ही श्रेष्ठ है।

एक पहुँचे हुए संत थे। वे एक बार किसी मंदिर में ठहरे थे। उनके पास एक लोमड़ी आई और मनुष्यों की भाषा में बोलने लगी :

''महाराज ! मैं कोई साधारण लोमड़ी नहीं हूँ। अपनी एक भूल की वजह से मुझे लोमड़ी की योनि मिली है। मैं आपके पास बड़ी आशा लेकर आई हूँ। आप ही मुझे इस नीच योनि में सड़ने से बचा सकते हैं।''

संत ने अपने करुणामय स्वभाववश पूछा :

''बोल, तुझे इस योनि में कैसे आना पड़ा और मैं तेरी क्या मदद कर सकता हूँ ?''

लोमड़ी ने अपना भूतकाल बताते हुए कहा :

''मैं पहले एक बड़ा मंडलेश्वर था। उस वक्त मेरी खूब ख्याति थी, खूब धन-वैभव था। एक बार किसीने आकर मुझसे ज्ञानी के बारे में कुछ पूछा, तब मैंने अपनी शेखी बघार दी और तभी से मेरा दुर्भाग्य शुरू हो गया। कुछ ही क्षण में आकाशवाणी सुनाई दी :

'मूर्ख ! ज्ञानी के बारे में कुछ जानता न था तो क्यों बकवास की ? अति सुख-सुविधा में रहकर भोग-भोगने से तेरी बुद्धि में रजोगुण और तमोगुण बढ़ गये हैं। तेरी पशुबुद्धि हुई है। जा, तू लोमड़ी बन जा।'

इस श्राप से श्रापित हुआ मैं बहुत रोया, खूब माफी माँगी। तब पुनः आकाशवाणी हुई :

'जब तू ज्ञानी के संबंध में पूर्ण रूप से समझेगा, तब तेरी सद्गति होगी।'

महाराज ! आज तक मैं कई साधु-संतों के पास गया किन्तु कोई ब्रह्मज्ञानी महापुरुष न मिलने के कारण पिछले कई सालों से इस हल्की योनि में भटक रहा हूँ। अब आप मुझे ज्ञानी की महिमा बताने की कृपा करें। ज्ञानी को कार्य-कारण के नियम लागू होते हैं या नहीं ?''

कई लोगों के मन में यह प्रश्न उठता होगा कि : 'ज्ञान हो जाने के पश्चात् भी ज्ञानवानों को प्रारब्ध क्यों भुगतना पड़ता है ? एक बार आत्मज्ञान हो जाने के बाद उन पर फिर कार्य-कारण का नियम क्यों लागू होता है ? ज्ञानवानों को तो सामान्य मनुष्यों से निराला होना चाहिए। उन पर यदि कार्य-कारण का नियम लागू नहीं होता तो फिर वे बीमार क्यों पड़ते हैं ? उनके बाल सफेद क्यों हो जाते हैं ? उनकी मृत्यु क्यों होती है ?' आदि-आदि।

कोई-कोई कहते हैं कि : 'ब्रह्मज्ञानी को तो सब कुछ ब्रह्ममय दिखता है फिर राज्य करना, शत्रुओं को मारना, ये सब वे क्यों करते हैं ?'

इन्हीं सब व्यर्थ बातों में हम अपना अमूल्य समय गँवा बैठते हैं। आत्म-साक्षात्कार की अनुभूति किये बिना केवल बुद्धि से तर्क करके आत्मज्ञानी के बारे में कुछ भी बोलना नादानी है, मूर्खता है।

वे आत्मपद में प्रतिष्ठित महापुरुष थे। निजानंद

की मस्ती में मस्त रहनेवाले और प्रारब्धानुसार जीवन व्यतीत करनेवाले वे मस्तराम फकीर थे। उन्होंने लोमड़ी के रूप में श्रापित मंडलेश्वर को सूक्ष्म रहस्य समझाते हुए कहा :

''ज्ञानवानों पर कार्य-कारण का नियम लागू नहीं होते हुए भी बाहर से लागू होता हुआ दिखता है। कार्य-कारण का नियम बनानेवाले वे तत्त्वरूप से खुद होते हैं। उनके ऊपर दूसरा कोई नहीं होता। इस प्रकार उन्हें यह नियम नहीं बाँध सकता। ज्ञानवान किसी भी प्रकार के बंधन में नहीं होते। वे स्वतंत्र होते हैं किन्तु कार्य-कारण के नियम बनाते-बनाते वे खुद उस नियम पर चलने के लिए राजी हो जाते हैं। इस प्रकार वे वास्तव में सब नियमों से परे होते हुए भी बाह्य व्यवहार से नियम के अनुसार जीवन बिताते हैं।''

जैसे सड़कों पर आने-जानेवाले वाहनों को नियमानुसार बाँये से चलना पड़ता है। जिनके अंतर्गत सारा आर. टी. ओ. डिपार्टमेन्ट काम कर रहा है, उन राष्ट्रपति की गाड़ी भी इसी नियम के अनुसार चलती है। बाह्य व्यवहार से वे भी नियमानुसार चलते हुए दिखेंगे क्योंकि उन्होंने जब नियम बनाया तब स्वयं भी उस नियम को स्वीकार कर लिया। इसी प्रकार ज्ञानवान कार्य-कारण के नियमों से मुक्त होते हैं लेकिन सहजरूप से स्वीकार करके वे भी कार्य-कारण के नियम पर चलते हुए प्रारब्धानुसार जीवन व्यतीत करते हैं।

कथा कहती है कि संत की बात सुनकर लोमड़ी की सद्गति हो गई। उसे परम शांति प्राप्त हुई।

**ब्रह्मज्ञानी का कथ्या न जाए आधा आखर।**
**नानक ! ब्रह्मज्ञानी सबका ठाकुर।**
**ब्रह्मज्ञानी की गत कौन बखाने।**
**नानक ! ब्रह्मज्ञानी की गत ब्रह्मज्ञानी जाने॥**

प्रारब्धानुसार ब्रह्मज्ञानी भिन्न-भिन्न प्रकार की चेष्टाएँ करते हुए दिखेंगे। जैसे, कोई ज्ञानी महापुरुष स्त्रियों के साथ, कोई नन्दनवन में विचरते हुए, कोई गन्धर्वगायन करते हुए, कोई नौबत-नगारे आदि सुनते हुए दिखेंगे परंतु वे इन सब भोगों को अनासक्त भाव से भोगते हुए निजानंद में ही तल्लीन रहते हैं। ब्रह्मसुख का स्वाद चख लेने के पश्चात् फिर उनका मन इन सांसारिक विषयों में आसक्त नहीं होता। जैसे, विशालकाय होने के कारण हिमालय या सुमेरु पर्वत छोटे-से तालाब में नहीं डूबता, ऐसे ही ब्रह्मज्ञानी की ब्रह्माकार वृत्ति हो जाने से चित्त इतना विशाल हो जाता है कि किसी भी सांसारिक विषय में वह चित्त नहीं डूब सकता। जैसे छोटी-सी चींटी चुल्लू भर पानी में डूब जाती है और विशालकाय हाथी सरोवर में भी नहीं डूबता, ऐसे ही अल्प मति का, संकुचित वृत्ति का, 'मेरे-तेरे' में रचा-पचा रहनेवाला साधारण मनुष्य संसार के भोग-विलास में आसक्त होकर संसारसागर में डूब जाता है, जबकि सूक्ष्म मति के, व्यापक वृत्ति के, **'सर्वोऽहं'** भाव में स्थित रहनेवाले आत्म-साक्षात्कारी महापुरुष प्रारब्ध वेग से संसार में अत्यधिक डूबे रहने पर भी, उससे अलिप्त रहकर अपने निज स्वरूप की मस्ती में सराबोर रहते हैं।

*

# अब देरी क्यों ?

*- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू*

योगशास्त्र के अनुसार हमारे शरीर में सात केन्द्र माने गये हैं : (१) मूलाधार (२) स्वाधिष्ठान (३) मणिपुर (४) अनाहत (५) विशुद्धाख्य (६) आज्ञा (७) सहस्रार

जीवन के प्रथम सात वर्ष में पहला केन्द्र विकसित होता है। दूसरे सात वर्ष में भावनाओं का विकास होता है। तीसरे सात वर्ष में बुद्धि-विचारशक्ति का विकास होता है। मनुष्य जब तक इन तीन केन्द्रों में रहता है, तब तक उसका उत्थान-पतन होता रहता है। कई लोग ६०, ७०, ८० साल की उम्र तक भी केवल ये ही तीन केन्द्र विकसित कर पाते हैं। कोई-कोई सौभाग्यशाली ही चौथे केन्द्र में प्रवेश पाता है। उससे भी ज्यादा तीव्र साधना करनेवाला पाँचवें केन्द्र में प्रवेश पाता है।

गुजरात में अमदावाद के पास नरोड़ा से आगे वरसोड़ा गाँव में नदी के तट पर एक जगह गुफा बनाकर संत लालजी महाराज रहते थे। वे चौबीसों घण्टे मौन रहते थे। रात्रि को दो बजे बैठकर जप करते थे। आहार नहीं लेते थे, अतः नींद भी कम आती थी। थोड़े दिन इसी तरह बीत गये।

एक दिन इसी प्रकार वे जप कर रहे थे कि अचानक उन्हें काले-कलूटे पाँच आदमी आते दिखाई दिये। उन्हें देखकर लालजी महाराज विचार ही कर रहे थे कि 'पता नहीं कौन हैं ? क्यों आये हैं ?' इतने में वे पाँचों बोलने लगे :

पहला : ''इधर क्यों बैठा है ? यहाँ क्या कर रहा है ?''

दूसरा : ''पकड़ लो इसको।''

तीसरा : ''कुचल डालो।''

चौथा : ''पीस डालो।''

पाँचवाँ : ''निचोड़ डालो।''

ऐसा कहकर वे लालजी महाराज को पकड़ने के लिए आगे बढ़े। उनका शरीर अत्यंत विकराल राक्षस के समान हो गया। उनकी हथेलियाँ तो इतनी बड़ी थीं कि उनमें सामान्य कद का व्यक्ति भी चिड़िया जैसा लगे।

बाद में लालजी महाराज ने बताया : ''फिर मैं घबरा गया। अंधेरी रात थी। बीहड़ इलाका था। भयानक सन्नाटा छाया हुआ था। मैं पुकार उठा कि 'हे प्रभु ! अब तेरे सिवाय मेरा कोई दूसरा रक्षक नहीं है।' फिर मैं जोर-जोर से नामजप करने लगा। लगभग आधे घंटे तक मेरी आँखें बंद रहीं। बाद में जब आँखें खोलीं तो देखता हूँ कि वे पाँचों विकराल आकृतियाँ देदीप्यमान, मुकुटधारी देवपुरुषों के रूप में खड़ी हैं। देखते-ही-देखते एक-एक करके वे देवपुरुष उस बीहड़ में अदृश्य होने लगे। जब पाँचवाँ भी आधा अदृश्य हो चुका, तब वह बोला :

''तू घबराना मत। हम गंधर्व हैं। विहार करने निकले थे। हम तेरी परीक्षा कर रहे थे।''

भजन करते-करते जब साधक पाँचवें केन्द्र में पहुँचता है तो कभी यक्ष दिखते हैं तो कभी गंधर्व-किन्नर दिखते हैं, कभी पूर्वजन्म दिखता है तो कभी रिद्धि-सिद्धियाँ हाथ लगती हैं। फिर भी साधक को चौथे-पाँचवें केन्द्र में रुकना नहीं चाहिए, वरन् और आगे जाने का प्रयत्न करना चाहिए।

आगे बढ़ते-बढ़ते आप उस तत्त्व तक भी पहुँच सकते हो, जहाँ योगी लोग रमण करते हैं, जहाँ महापुरुष स्थित होते हैं एवं जहाँ से ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति एवं लय का दायित्व

संभालते हैं। जहाँ संत एकनाथजी, नामदेवजी, ज्ञानेश्वरजी, नरसिंह मेहता, तुलसीदासजी, सूरदासजी, कबीरजी, नानकजी, रैदासजी आदि महापुरुष एवं मीरा, मदालसा, गार्गी आदि महान् महिलाएँ पहुँची हैं, वहाँ आप भी पहुँच सकते हो, क्योंकि एक मनुष्य ने जो काम किया है, उसे सभी मनुष्य कर सकते हैं। यह विश्व कर्मप्रधान है। जो जैसा कर्म करता है, वैसा ही फल पाता है।

तुलसीदासजी ने कहा है :

**करम प्रधान बिस्व करि राखा।**
**जो जस करइ सो तस फलु चाखा ॥**

मानव चाहे तो हल्के कर्म करके वृक्ष, कीट, पतंग आदि योनियों में जाये और चाहे तो एक-एक करके अपने सभी केन्द्रों का विकास करते हुए परब्रह्म परमात्मा को पा ले। यह उसी पर निर्भर करता है।

आपका जन्म भारतभूमि में हुआ है। आपको मानव तन मिला है। आपके पास श्रद्धा है और आपको सत्संग भी मिल रहा है। जब इतने सारे सुयोग एक साथ एकत्रित हो ही गये हैं, तो फिर देर क्यों ? लापरवाही क्यों ?

कभी-भी अपने मन में नकारात्मक विचार न लाओ कि 'मदालसा को प्रभुदर्शन हुआ था, जनक को हुआ था, शुकदेवजी को हुआ था, किन्तु मुझे कैसे हो सकता है ?' नहीं नहीं... दृढ़ विश्वास रखकर आगे बढ़ो तो वह आपको भी अवश्य मिल सकता है। 'हम नहीं कर सकते...' ऐसे नकारात्मक विचार से बड़ा दूसरा कोई विघ्न ही नहीं है, इससे बढ़कर दूसरा कोई शत्रु नहीं है। यदि एक बार सद्‌गुरु कर लिये, तो फिर ऐसा सोचना कि 'हमारे में योग्यता नहीं है' यह अनुचित है। सद्‌गुरु यह सब अच्छी तरह जानते हैं। अतः दृढ़ विश्वासपूर्वक उनके बताये हुए मार्ग पर चल पड़ना चाहिए।

मानव दूसरे-तीसरे शरीर में ही क्यों रह जाता है ? क्योंकि उसके पूर्व के संस्कार, मित्र, स्नेही, संबंधी, सुख ये सब मानव को दूसरे-तीसरे शरीर में ही रखना चाहते हैं। जो चौथे-पाँचवें केन्द्रों में ले जाना चाहते हैं और उन पर भरोसा नहीं होता, तब भी व्यक्ति दूसरे-तीसरे शरीर में ही रह जाता है। अगर भरोसा हो भी जाता है तो अपनी पकड़ें, अपनी मान्यताएँ नहीं छोड़ी जातीं, इसलिए भी लोग दूसरे-तीसरे शरीर में ही रह जाते हैं।

गुरुमंत्र लेने के समय, दीक्षा के समय, सद्‌गुरु के समक्ष नारियल-दक्षिणा आदि रखकर भावना तो करते हैं कि 'हम सदियों से जन्म-मरण के थपेड़े सह रहे हैं। अब अपना तन-मन-धन आपको अर्पित करते हैं, ताकि आपकी आज्ञा में चलकर इन थपेड़ों से मुक्त हो सकें।' किन्तु अपनी पकड़ें, अपना अहं बनाये रखते हैं, मिटनेवाली वस्तुओं का सहारा बनाये रखते हैं, इसीलिए उन्नत नहीं हो पाते। बुद्धिमान तो वह है जो ईश्वर के लिए सबको दाँव पर लगा दे। यश, मान-प्रतिष्ठा, पुत्र-परिवार इन सबको दाँव पर लगा दे, तब भी सौदा सस्ता है।

साधु वासवाणी के पास एक सरदार आया एवं उनके पैर पकड़कर बोला :

''हमने सुना है कि संत पुरुष यदि चाहें तो भगवान का दर्शन करा सकते हैं। अब आप जैसे संत मिल गये हैं, अतः जब तक भगवान के दर्शन नहीं होंगे, तब तक हम यहाँ से नहीं उठेंगे। आप जो बोलेंगे, हम वही करेंगे किन्तु एक बार भगवान का दर्शन करवा दें। आप बोलें तो मैं नौकरी से अभी त्यागपत्र दे दूँ। आप बोलें तो मैं अपनी सारी धन-संपत्ति आश्रम के नाम कर दूँ। आप बोलें तो अपनी बीबी को बर्तन माँजने के लिए तथा बच्चों को झाड़ू लगाने के लिए सेवा पर लगा दूँ। आप बोलें तो मैं यह पगड़ी-वगड़ी उतारकर संन्यासी हो जाऊँ। आप जो कहें, आपकी सब शर्तें मुझे मंजूर हैं। किन्तु बस, आप मुझे भगवान का दर्शन करवा दें।''

साधु वासवाणी : ''छोड़ो ये सब बातें। जाओ, अपनी 'ड्युटी' संभालो।''

सरदार : ''नहीं बाबाजी ! बस, आज कृपा करें। मुझे आपकी हर शर्त कबूल है, पर एक बार रब का दर्शन करा दें। मैं अपनी सारी मिल्कियत आपके श्रीचरणों में रख दूँगा। आप जो बोलेंगे, मैं वही करूँगा और जब आप रोटी देंगे तभी खाऊँगा, माँगूँगा भी

नहीं... पर दर्शन करा दें।''

साधु वासवाणी पुनः बोले :

''अभी छोड़ो, सरदारजी ! अभी देर है।''

''बाबाजी ! देर कैसी ? कब मर जायें, कोई पता नहीं। ४५ साल का तो हो गया हूँ, काल सामने खड़ा है, देर कैसी ? कृपा करें।''

''भाई ! पैर पकड़ना छोड़ दे। अभी तो 'ड्यूटी' पर जा। फिर देखेंगे।''

''नहीं बाबाजी ! आप जो बोलें, मैं वह सब करने को तैयार हूँ।''

''अच्छा... तो नहीं मानता ? जिद करता है ?''

''बस, आप आज्ञा करें।''

''मेरी आज्ञा मानेगा ?''

''जी, जरूर मानूँगा।''

''अगर आज्ञा मानेगा तो मैं जरूर दर्शन करा दूँगा।''

''आप तो बस, आज्ञा करें। मैं आपकी हर आज्ञा मानूँगा।''

''बिल्कुल मानेगा ? किसीसे पूछना-वूछना हो तो पूछ ले। दो दिन की मोहलत दे दूँ।''

''नहीं बाबाजी ! किसीसे नहीं पूछना। आप तो बस, आज्ञा करें।''

साधु वासवाणी बोले : ''सरदार ! यदि तू हर आज्ञा पालने को तैयार है तो एक काम कर। आधे बाल काट दे और सब कपड़े निकाल दे। मैं तुझे एक कौपीन देता हूँ, उसे पहन ले। फिर जैसे रोज अपने ऑफिस जाता है, वैसे ही आज भी वहाँ जाकर आ।''

यह सुनकर सरदार बोल उठा : ''बाबाजी ! सरकारी नौकरी है। ऐसा कैसे हो सकता है ?''

हमारे और ईश्वर के बीच यह अहं ही तो बाधक है। इस अहं को पूर्ण रूप से मिटा डालें तो परमात्मा के दर्शन करना कठिन नहीं है। साधक जब चौथे-पाँचवें केन्द्र में पहुँचता है तब उसे अप्सरा आदि के दर्शन होते हैं। कभी-कभी वह तुष्टि नामक भूमिका में पहुँच जाता है। यदि साधक वहाँ भी नहीं रुकता, बल्कि और आगे बढ़ता ही जाता है तो छट्ठे केन्द्र में और अंत में सातवें केन्द्र में पहुँचकर परमात्म-प्राप्तिरूपी मंजिल को प्राप्त कर ही लेता है।

एक-एक केन्द्र का विकास करते-करते सातवें केन्द्र तक पहुँचना एक मार्ग है। किन्तु एक दूसरा मार्ग भी है कि गुरुकृपा एवं तत्त्वविचार से सीधे ही अंतिम मंजिल तक पहुँच जायें। जैसे अमदावाद से दिल्ली पहुँचना हो तो एक मार्ग है कि ट्रेन द्वारा कई स्टेशनों पर रुकते-रुकते जायें और दूसरा मार्ग है कि वायुयान से सीधे दिल्ली पहुँच जायें। इस प्रकार एक-एक केन्द्र का विकास करते-करते सातवें केन्द्र तक पहुँचें अथवा तो तत्त्वविचार एवं गुरुकृपा से सीधे ही सातवें केन्द्र तक पहुँच जायें। किन्तु पहुँचें जरूर, क्योंकि यह मानव तन मिला ही इसलिए है कि मनुष्य अपने अंतिम लक्ष्य परमात्म-प्राप्ति को हासिल कर ले। याद रखो : परमात्मतत्त्व का अज्ञानी होकर जीना पाप नहीं, किन्तु परमात्मतत्त्व का अज्ञानी रहकर मरना पाप है।

*

**आकाशात्पतितं तोयं यथा गच्छति सागरं।**
**सर्वदेवनमस्कारं केशवं प्रति गच्छति॥**

'आकाश से गिरा हुआ पानी जैसे सागर में जाता है, वैसे ही सर्व देवों को किये गये नमस्कार केशव के प्रति जाते हैं।'

चतुर्भुज वैकुंठवासी श्रीविष्णु के किसी अवतार को केशव, कृष्ण या वासुदेव कहोगे तो गड़बड़ हो जाएगी। सर्व देवों को किये गये नमस्कार केशव या कृष्ण या वासुदेव की आकृति को नहीं जाते हैं, अपितु परात्पर परब्रह्म परमात्मा को ही जाते हैं। जो सबमें बस रहा है, वह वासुदेव है। जो सबको आकर्षित करता है, वह कृष्ण है। जो सबमें रम रहा है वह राम है। वह एक-का-एक अनेक रूपों में है। किसी भी देवी-देवताओं की आकृतियों को किया गया नमस्कार, वास्तव में उस निराकार चैतन्य परमात्मा को ही किया गया नमस्कार है।

नहीं... पर दर्शन करा दें।''

साधु वासवाणी पुनः बोले :

''अभी छोड़ो, सरदारजी ! अभी देर है।''

''बाबाजी ! देर कैसी ? कब मर जायें, कोई पता नहीं। ४५ साल का तो हो गया हूँ, काल सामने खड़ा है, देर कैसी ? कृपा करें।''

''भाई ! पैर पकड़ना छोड़ दे। अभी तो 'ड्यूटी' पर जा। फिर देखेंगे।''

''नहीं बाबाजी ! आप जो बोलें, मैं वह सब करने को तैयार हूँ।''

''अच्छा... तो नहीं मानता ? जिद करता है ?''

''बस, आप आज्ञा करें।''

''मेरी आज्ञा मानेगा ?''

''जी, जरूर मानूँगा।''

''अगर आज्ञा मानेगा तो मैं जरूर दर्शन करा दूँगा।''

''आप तो बस, आज्ञा करें। मैं आपकी हर आज्ञा मानूँगा।''

''बिल्कुल मानेगा ? किसीसे पूछना-वूछना हो तो पूछ ले। दो दिन की मोहलत दे दूँ।''

''नहीं बाबाजी ! किसीसे नहीं पूछना। आप तो बस, आज्ञा करें।''

साधु वासवाणी बोले : ''सरदार ! यदि तू हर आज्ञा पालने को तैयार है तो एक काम कर। आधे बाल काट दे और सब कपड़े निकाल दे। मैं तुझे एक कौपीन देता हूँ, उसे पहन ले। फिर जैसे रोज अपने ऑफिस जाता है, वैसे ही आज भी वहाँ जाकर आ।''

यह सुनकर सरदार बोल उठा : ''बाबाजी ! सरकारी नौकरी है। ऐसा कैसे हो सकता है ?''

हमारे और ईश्वर के बीच यह अहं ही तो बाधक है। इस अहं को पूर्ण रूप से मिटा डालें तो परमात्मा के दर्शन करना कठिन नहीं है। साधक जब चौथे-पाँचवें केन्द्र में पहुँचता है तब उसे अप्सरा आदि के दर्शन होते हैं। कभी-कभी वह तुष्टि नामक भूमिका में पहुँच जाता है। यदि साधक वहाँ भी नहीं रुकता, बल्कि और आगे बढ़ता ही जाता है तो छट्ठे केन्द्र में और अंत में सातवें केन्द्र में पहुँचकर परमात्म-प्राप्तिरूपी मंजिल को प्राप्त कर ही लेता है।

एक-एक केन्द्र का विकास करते-करते सातवें केन्द्र तक पहुँचना एक मार्ग है। किन्तु एक दूसरा मार्ग भी है कि गुरुकृपा एवं तत्त्वविचार से सीधे ही अंतिम मंजिल तक पहुँच जायें। जैसे अमदावाद से दिल्ली पहुँचना हो तो एक मार्ग है कि ट्रेन द्वारा कई स्टेशनों पर रुकते-रुकते जायें और दूसरा मार्ग है कि वायुयान से सीधे दिल्ली पहुँच जायें। इस प्रकार एक-एक केन्द्र का विकास करते-करते सातवें केन्द्र तक पहुँचें अथवा तो तत्त्वविचार एवं गुरुकृपा से सीधे ही सातवें केन्द्र तक पहुँच जायें। किन्तु पहुँचें जरूर, क्योंकि यह मानव तन मिला ही इसलिए है कि मनुष्य अपने अंतिम लक्ष्य परमात्म-प्राप्ति को हासिल कर ले। याद रखो : परमात्मतत्त्व का अज्ञानी होकर जीना पाप नहीं, किन्तु परमात्मतत्त्व का अज्ञानी रहकर मरना पाप है।

*

**आकाशात्पतितं तोयं यथा गच्छति सागरं।**
**सर्वदेवनमस्कारं केशवं प्रति गच्छति ॥**

'आकाश से गिरा हुआ पानी जैसे सागर में जाता है, वैसे ही सर्व देवों को किये गये नमस्कार केशव के प्रति जाते हैं।'

चतुर्भुज वैकुंठवासी श्रीविष्णु के किसी अवतार को केशव, कृष्ण या वासुदेव कहोगे तो गड़बड़ हो जाएगी। सर्व देवों को किये गये नमस्कार केशव या कृष्ण या वासुदेव की आकृति को नहीं जाते हैं, अपितु परात्पर परब्रह्म परमात्मा को ही जाते हैं। जो सबमें बस रहा है, वह वासुदेव है। जो सबको आकर्षित करता है, वह कृष्ण है। जो सबमें रम रहा है वह राम है। वह एक-का-एक अनेक रूपों में है। किसी भी देवी-देवताओं की आकृतियों को किया गया नमस्कार, वास्तव में उस निराकार चैतन्य परमात्मा को ही किया गया नमस्कार है।

# सद्गुरु : करुणा के सागर

*- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू*

**सद्गुरु मेरा शूरमा, करे शब्द की चोट।**
**मारे गोला प्रेम का हरे भरम की कोट ॥**

सद्गुरु की करुणा तो करुणा है ही, उनकी डाँट भी उनकी करुणा ही है। गुरु कब, कहाँ और कैसे तुम्हारे अहं का विच्छेद कर दें, यह कहना मुश्किल है।

श्रद्धा ही गुरु एवं शिष्य के पावन संबंध को बचाकर रखती है, वरना गुरु का अनुभव और शिष्य का अनुभव एवं उसकी माँग, इसमें बिल्कुल पूर्व-पश्चिम का अंतर रहता है। शिष्य के विचार एवं गुरु के विचार नहीं मिल सकते क्योंकि गुरु जगे हुए होते हैं सत्य में, जबकि शिष्य को मिथ्या जगत ही सत्य लगता है।

किन्तु शिष्य श्रद्धा के सहारे गुरु में ढल पाता है और गुरु करुणा से उसमें ढल जाते हैं। शिष्य की श्रद्धा एवं गुरु की करुणा- इसीसे गाड़ी चल रही है।

गीता में भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं :

**श्रद्धावान् लभते ज्ञानम्...**

श्रद्धा एक ऐसा सद्गुण है, जो तमाम कमजोरियों को ढँक देता है। करुणा एक ऐसी परम औषधि है, जो सब सह लेती है। दोनों में सहने की शक्ति है। जैसे, माँ बेटे की हर अंगड़ाई करुणावश सह लेती है, बेटे की लातें भी सह लेती है, वैसे ही गुरुदेव शिष्य की हर बालिश चेष्टाओं को करुणावश सहन कर लेते हैं। बाकी तो दोनों का कोई मेल-जोल संभव ही नहीं है।

एक बार रमण महर्षि को कुछ लोग खूब रिझा-रिझाकर अपने गाँव में ले गये। रमण महर्षि जैसे ब्रह्मवेत्ता साक्षात्कारी महापुरुष आ रहे हैं, यह जानकर गाँववालों ने अपनी एड़ी-चोटी का जोर लगाकर उनके स्वागत की तैयारियाँ कीं। बड़ा विशाल मंच तैयार किया गया।

लोग उनके दर्शन पाकर कृतार्थ हो गये। रमण महर्षि बहुत कम बोलते थे। उन्होंने थोड़े-से ही शब्द कहे तो तालियों की गड़गड़ाहट से गगनमंडल गूँज उठा। यह देखकर वे तुरंत मंच से उतर पड़े और खूब रोये। स्व. प्रधानमंत्री श्री मोरारजीभाई देसाई जिनके श्रीचरणों में जाकर बैठते थे, ऐसे उच्च कोटि के संत यदि रोने लग जायें तो लोगों को आश्चर्य होना स्वाभाविक है। लोगों ने पूछा :

''भगवन्! क्या बात है ? आप क्यों रो पड़े ?''

रमण महर्षि : ''गलती हो गयी।''

लोग : ''गलती ! कैसी गलती ?''

रमण महर्षि : ''तुम लोगों ने इतनी सारी तालियाँ बजाईं। जरूर मेरे से कोई गलती हो गयी।''

लोग : ''नहीं नहीं, आप इतना अच्छा बोले, इसीलिए हम लोगों ने तालियाँ बजाईं।''

रमण महर्षि : ''तुम लोग जीते हो मिथ्या में। मिथ्या में जीनेवाले लोगों को कोई बात अच्छी लगी है तो इसका मतलब यह है कि मैं सत्य से नीचे आया हूँ। मिथ्यावालों की लाइन में आया हूँ, तभी तुम्हें बात अच्छी लगी है। हे परमात्मा ! मुझे क्षमा करना।''

लोकानुरंजन परमार्थ नहीं है। बहुत लोग किसीको मानते हैं एवं उनका आदर करते हैं, इसलिए वे महात्मा हैं- ऐसी बात नहीं है। सद्गुरु या सत्य का साक्षात्कार किये हुए महापुरुष आपको जितना जान सकते हैं, उतना और सब मिलकर भी नहीं जान सकते। जैसे, दसवीं कक्षा के लाखों विद्यार्थी उतना नहीं जान सकते, जितना प्रोफेसर जान सकता है। यही बात सद्गुरु एवं शिष्य के विषय में समझनी चाहिए।

लोगों की वाहवाही से सत्य की कसौटी नहीं होती। धन-वैभव से भी सत्य को नहीं मापा जा सकता और न ही सत्ता द्वारा सत्य को मापना संभव है। सत्य तो सत्य है। उसे किसी भी असत्य वस्तु से मापा नहीं जा सकता।

माँ आनंदमयी के पास इन्दिरा गाँधी जाती थीं, इसलिए माँ आनंदमयी बड़ी हैं - ऐसी बात नहीं है। वे तो हैं ही बड़ी, बल्कि यह इन्दिरा गाँधी का सौभाग्य था कि ऐसी महान् विभूति के पास वे जाती थीं। रमण महर्षि के पास मोरारजीभाई जाते थे तो इससे रमण महर्षि बड़े थे, ऐसी बात नहीं है वरन् मोरारजीभाई का सौभाग्य था कि उनके श्रीचरणों में बैठकर वे अपना भाग्य बनाते थे।

लोग यदि ऐसे ब्रह्मवेत्ता महापुरुषों को जानते-मानते हैं तो यह लोगों का सौभाग्य है। कई ऐसे लोग हैं जिन्हें लाखों लोग जानते हैं, फिर भी वे ऊँची स्थिति में नहीं होते। कई ऐसे महापुरुष होते हैं जिन्हें उनके जीवनकाल में लोग उतना नहीं जानते जितना उनके देहावसान के बाद जानते हैं। जैसे, जीसस जिस वक्त क्रॉस पर चढ़ रहे थे, तब लाखों लोग उनके विरोधी थे। केवल छः लोग उनको मानते थे। ...और आज ? पृथ्वी के करीब आधे लोग उनको मानते हैं, जो ईसाई कहलाते हैं। भारत में तो ऐसे कई महापुरुष हैं जिन्हें कोई नहीं जानता, जबकि वे बड़ा ऊँचा जीवन जीकर चले जाते हैं।

जैसे प्रधानमंत्री आदिवासियों के बीच आकर उन्हीं के जैसी वेशभूषा में रहें तो उनकी योग्यता को आदिवासी क्या जान पायेंगे ? वे तो उनके शरीर को ही देख पायेंगे। उनकी एक कलम से इन्कमटैक्स के कितने ही नियम बदल जाते हैं, कितने ही सेठों की नींद हराम हो जाती है। इस बात का ज्ञान आदिवासियों को नहीं हो पायेगा। ऐसे ही ज्ञानी महापुरुष भी स्थूल रूप से तो और लोगों जैसे ही लगते हैं, खाते-पीते, लेते-देते दिखते हैं किन्तु उनकी सूक्ष्म सत्ता का बयान कर पाना संभव ही नहीं है। किसीने ठीक ही कहा है :

**पारस अरु संत में बड़ा अंतरहू जान।**
**एक करे लोहे को कंचन ज्ञानी आप समान ॥**

पारस लोहे को स्वर्ण तो बना सकता है किन्तु उसे पारस नहीं बना सकता, जबकि ज्ञानी पुरुष व्यक्ति को अपने ही समान ज्ञानी बना सकता है।

ईश्वर दर्शन देने के लिए तैयार हैं, गुरु समर्थ हैं तो फिर हम देर क्यों करें ? यदि दर्शन करते-करते मर भी गये तो मरना सफल हो जायेगा एवं दर्शन के बाद जिये तो जीना भी सफल हो जायेगा।

ऐसे ही प्रसिद्ध-अप्रसिद्ध ब्रह्मज्ञानी संतों का दर्शन व सत्संग करते-करते मर भी गये तो अमर पद के द्वार खुल जाएँगे और जीते रहे तो भी समय पाकर जीवन्मुक्त हो जाएँगे।

❊

*भारतीय संस्कृति की झलक दिखाती पवित्र तीर्थस्थली वाराणसी में आत्मविद्या एवं योग सामर्थ्य के धनी पूज्य बापू के पावन सत्संग-गंगा में से आचमन :*

**अभिवादनशीलस्य नित्यवृद्धोपसेविनः ।**
**चत्वारो तस्य वर्धन्ते आयुः विद्या यशो बलम् ॥**

'अभिवादनशील एवं बड़ों का सम्मान करनेवाले की आयु, विद्या, यश तथा बल में वृद्धि होती है ।'

जब स्वामी कार्तिकेय एवं गणेशजी में यह विवाद छिड़ गया कि 'हम दोनों में से बड़ा कौन है ?' तब शिव-पार्वती ने यह फैसला किया कि जो तीनों लोकों की सात बार परिक्रमा करके कैलास पहले पहुँचेगा, वही बड़ा है।

कार्तिकेय स्वामी यात्रा के लिए चल पड़े। किन्तु गणेशजी ने माता-पिता को ही ब्रह्माण्ड मानकर, तीर्थस्वरूप मानकर, उन्हीं की सात बार प्रदक्षिणा कर ली और देवताओं में सर्वश्रेष्ठ होने का गौरव पा लिया।

मातृ-पितृभक्ति का ऐसा उदाहरण भारतीय संस्कृति के अलावा अन्यत्र मिलना दुर्लभ है। इस देश के बच्चों का सौभाग्य है कि उन्हें अपनी महान् संस्कृति की छाया मिली है। उनकी शिक्षा का आधार भारतीय संस्कृति है।

माता, पिता, गुरु एवं अतिथि को देवस्वरूप माननेवाली भारतीय संस्कृति ही जीवन का सही विकास कर सकती है।

माता जीजाबाई की प्रेरणा से जब बालक शिवा दीक्षा प्राप्त करने के लिए स्वामी रामदास के पास गया तो समर्थ ने दीक्षा के साथ-साथ शिवाजी को मिट्टी, घोड़े की लीद एवं नारियल प्रसादस्वरूप दिया। बालक शिवा जब गुरु के द्वारा प्रसाद रूप में दिये गये संकेत को न समझ पाया तो माता जीजाबाई ने स्पष्ट किया : ''मिट्टी का तात्पर्य है कि तू महीपति (राजा) बनेगा। संकट के समय घोड़े के द्वारा तेरी रक्षा होगी, इसलिए गुरुजी ने घोड़े की लीद दी है तथा किसी भी बड़े कार्य से तुझे अहंकार न आ जाय, इसलिए नारियल दिया है।''

इतिहास इस बात का साक्षी है कि जब मुगल सम्राट औरंगजेब से लड़ते-लड़ते शिवाजी किले के अन्दर शत्रु-सेना से घिर गये थे तब समर्थ रामदास की उसी कृपा ने घोड़े से ऊँचा किला कुदवाकर शिवाजी के प्राणों की रक्षा की थी।

शुभ संस्कार देनेवाली जीजाबाई जैसी माता, समर्थ रामदास जैसे समर्थ महापुरुष तथा माता एवं गुरु के आदर्शों पर चलनेवाले शिवाजी जैसी सन्तानें ही भारत को सुखमय बना सकती हैं।

* * *

प्रेरणा लेनी है तो बालक मदन मोहन मालवीय से लो, जिसने घायल कुत्ते की सेवा करना विद्यालय जाने से भी ज्यादा आवश्यक समझा। प्रेरणा लेनी है तो १४ वर्षीय मगध कुमार स्कन्दगुप्त से लो, जिसने हूणों के आक्रमण से अपनी मातृभूमि की रक्षा की। प्रेरणा लेनी है तो श्रीरामचन्द्रजी से लो, जो लंका पर विजय प्राप्त करने के बाद भी अपने गुरु श्री वशिष्ठजी महाराज से कहते हैं : ''हे गुरुवर ! यह विजय तो मैंने आपके आशीर्वाद से ही प्राप्त की है। इसमें मेरा कुछ भी नहीं है।''

सिर्फ शरीर से बलवान् होना ही पर्याप्त नहीं है। हाथी बलवान् तथा विशालकाय होता है किन्तु उद्यमशीलता एवं बौद्धिक बल के अभाव में वह विशालकाय हाथी नन्हीं कायावाले शेर से हमेशा पराजित होता रहता है। उद्यम और साहस तथा

बौद्धिक बल का उपयोग करके सिंह जंगल का राजा बन जाता है।

* * *

विदेशी चैनलों तथा पाश्चात्य संस्कृति द्वारा फैल रहे सांस्कृतिक प्रदूषण के कारण भारत के बालक एवं युवा अपनी संस्कृति से कटते जा रहे हैं। वे अपनी मर्यादा को लाँघकर अपने जीवन को विषय-विकारों के अंधे कुएँ में धकेल रहे हैं।

इसलिए विद्यार्थियों एवं युवाओं को चाहिए कि वे अपनी संस्कृति की रक्षा के लिए कमर कसें। भ्रष्ट खान-पान एवं आचार-विचार से सर्वथा दूर ही रहें तथा संयम, साहस, धैर्य, बुद्धि, शक्ति एवं उद्यम आदि दिव्य गुणों से अपने जीवन को ओजस्वी-तेजस्वी बनाकर अमर हो जायें।

* * *

*पटना (बिहार) में आयोजित पाँच दिवसीय सत्संग समारोह में पूज्यश्री की अमृतवाणी की एक झलक*

## गीता मानव को दुःखरहित बनाने की शक्ति रखती है

गीता हमें निर्भय होने की शिक्षा देती है। श्रीराम धनुष-बाण के बिना, भगवान शिव त्रिशूल के बिना तथा माँ जगदम्बा तलवार के बिना कैसे लगते ? अर्थात् शोभा नहीं पाते, उसी प्रकार सज्जनता भी बिना निर्भीकता के नहीं शोभती है। सज्जन के समक्ष सज्जन बन जाओ और दुष्टों से लोहा लेने का सामर्थ्य रखो।

गाँधीजी कहते थे : ''जुल्म करना तो पाप है ही, किन्तु जुल्म सहना तो उससे भी बड़ा पाप है।''

धर्म कायर नहीं बनाता। निर्भीक होकर बोलोगे तभी सफलता मिलेगी। न आप उल्लू बनो, न दूसरों को उल्लू बनाओ। भय के विचारों से ही भय पैदा होता है।

गीता में चार विद्याएँ हैं : ईश्वरीय विद्या, अभय विद्या, समत्व विद्या एवं जीव-ब्रह्म एकत्व विद्या। ये चारों विद्याएँ जब तक मानव जीवन में एक साथ नहीं मिलतीं, तब तक मनुष्य का दुर्भाग्य चालू रहेगा।

गीता में वह शक्ति है जिससे झोंपड़ी में रहनेवालों को महलों का सुख तथा सड़कों पर रहनेवालों को छत का सुख मिल जाता है। गीता मानव को दुःखरहित बनाने की शक्ति रखती है।

शास्त्रों ने ठीक ही कहा है : ''अमीरों में परोपकार व संतोष तथा गरीबों में तितिक्षा व त्याग नहीं है तो गरीब और अमीर गले में फंदा बाँधकर डूब मरें। गरीबों का शोषण करनेवाले अमीर और अमीरों को देखकर जलनेवाले गरीब दोनों को गले में पत्थर का फंदा डालकर डूब मरना चाहिए।

* * *

## प्राणिमात्र परमात्मा के सनातन अंश हैं

इस संसार में हिन्दू, मुस्लिम, यहूदी ईसाई ही नहीं वरन् प्राणिमात्र परमात्मा के सनातन अंश हैं। सभी एक समान हैं। इसलिए हमें स्वयं को संपूर्ण भाव से ईश्वर के चरणों में समर्पित कर देना चाहिए। इससे अहंकार का विलय एवं मानवीय संवेदनाओं का विकास होता है और मनुष्य देवत्व की ओर बढ़ता हुआ ईश्वर से तादात्म्य स्थापित करने में समर्थ हो जाता है।

जो ईश्वर के सिवाय अन्यत्र मन लगाता है, उसे अंत में मुँह की खानी पड़ती है तथा निराशा ही हाथ लगती है। इसलिए सभी ओर से मन को हटाकर केवल ईश्वर के चरणों में, भक्ति-भावना में लगाना चाहिए।

सभी ऊपरी अलगाव से वृत्ति को हटाकर सभी की गहराई में छुपे हुए सच्चिदानंद पर वृत्ति रखना चाहिए।

* * *

## सत्संग ईश्वर तथा जीव के बीच की दूरी को मिटाता है

हम अनंत ईश्वर की सन्तानें हैं तथा ईश्वर सबके हृदय में समान रूप से बस रहा है, परंतु अज्ञानतावश मनुष्य अपने तथा ईश्वर के शाश्वत संबंध को भूलकर संसार के मिथ्या विषय-विकारों में उलझ जाता है। मनुष्य का दुःख तब तक नहीं

मिटता, जब तक नारायण के साथ उसका एकत्व नहीं होता । सत्संग ईश्वर तथा जीव के बीच की इसी दूरी को मिटाता है। सत्संग का प्रसाद पूर्ण रूप से पचा लिया तो समझो भगवान के साथ मेल हो गया। सत्संग मिलने से मनुष्य के पाप-ताप निवृत्त हो जाते हैं तथा ईश्वरीय सुख की प्राप्ति होती है। सत्संग से बुद्धि उन्नत होती है, जिससे मनुष्य ज्ञान, भक्ति तथा वैराग्य के सहारे भगवान तक को प्राप्त कर सकता है।

सत्संग में श्रोताओं को बिना किसी परिश्रम के नाना प्रकार के पुराणों, उपनिषदों और वेदादि का ज्ञान संतों के प्रवचन द्वारा सहज ही प्राप्त हो जाता है। इसलिए सत्संग की महिमा अनंत है। सत्संग में सौभाग्यशाली व्यक्ति ही भाग ले पाता है।

संसार में जो भी दुःख, कष्ट, क्लेश आदि दुर्गुण-विकार हैं, वे सब प्रज्ञादोष-अपराध के कारण हैं।

**प्रज्ञापराधो मूलं सर्वदोषानाम् ।**

अर्थात् प्रज्ञा का अपराध सर्व अपराधों का मूल है । सनातन धर्म में प्रज्ञा का सबसे अधिक आदर किया गया है । प्रज्ञा सत्य को सत्य की भाँति देखने की दृष्टि है तथा यह दृष्टि सत्संग से ही प्राप्त होती है ।

*

## नई कैसेटें

*दिल्ली में चतुर्थ विश्वशांति सत्संग समारोह के दौरान पू. बापू के पावन करकमलों द्वारा निम्नलिखित ६ ऑडियो कैसेटों का विमोचन हुआ :*

*१. साधना में आधुनिक अभिगम*
*२. पारसमणि की प्राप्ति*
*३. नित्य योग*
*४. धर्म का रहस्य*
*५. सुखी होने की कला*
*६. पंजाबी श्रीआसारामायण*
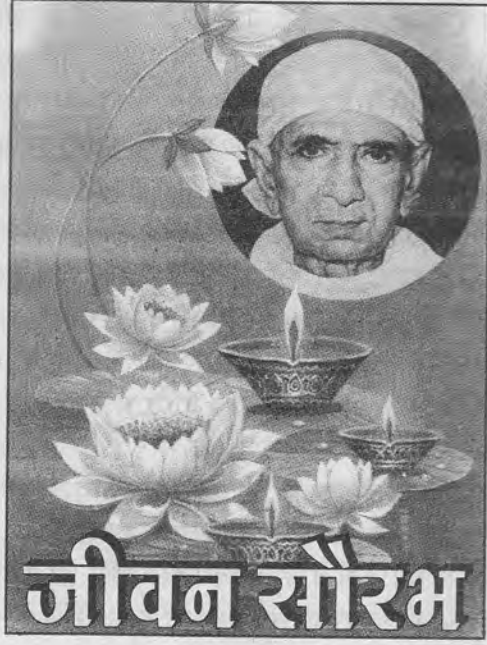
योगसिद्ध ब्रह्मलीन ब्रह्मनिष्ठ
प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद स्वामी श्री

## लीलाशाहजी महाराज : एक दिव्य विभूति

[गतांक का शेष]

सिंगापुर में माऊन्ट बेटन रोड पर स्थित सिंधी एसोसियेशन क्लब में उनके आवास की व्यवस्था की गयी थी। इन अलख के औलिया के सिंगापुर के निवास के दौरान् अनेकों लोगों को उनके सत्संग-कथामृत का लाभ मिला। उनके निवास-स्थान पर रोज सुबह ७ से ९ बजे तक लोगों को दर्शन, सत्संग एवं यौगिक क्रियाएँ भी सीखने का सुनहरा अवसर मिलता एवं शाम के ७ से ९ तक परम भाग्यवान भक्तों को सत्संग का लाभ मिलता।

पूज्य स्वामीजी अत्यंत सरल एवं सचोट भाषा में मानव जीवन का ध्येय एवं सद्गुरु का महत्त्व समझाते हुए कहते :

''प्रत्येक मनुष्य का मुख्य कर्त्तव्य है अपनेको जानना और परमात्म-प्राप्ति के मुख्य ध्येय को पाने के लिए प्रयत्न करना। जिस प्रकार किसी व्यक्ति को

भारत में काशी या मथुरा जैसे दूर के स्थलों की यात्रा पर जाना हो तो उस स्थल पर कैसे जाया जा सकता है - यह जानने के लिए मार्ग बतानेवाले मार्गदर्शक की जरूरत पड़ती है, उसी प्रकार परमधाम तक पहुँचना हो, ब्रह्मस्वरूप की प्राप्ति करनी हो तो ज्ञान, भक्ति और कर्मयोग में से जो भी अनुकूल पड़ता हो उस मार्ग को ग्रहण करने की जरूरत पड़ती है एवं यह बताने के लिए भी संत, महात्मा एवं सद्गुरु जैसे मार्गदर्शक की जरूरत पड़ती है । ऐसे महात्मा एवं सद्गुरु अधिकारी साधक की योग्यता देखकर उस मार्ग पर चलने का उपदेश एवं मार्गदर्शन देते हैं । उनके उपदेशानुसार चलने से साधक निर्विघ्न होकर परमात्म-प्राप्ति के लक्ष्य तक पहुँच जाता है ।

संतों का सहज स्वभाव है उपदेश द्वारा मार्ग बताना एवं जिज्ञासुओं का कर्त्तव्य है बताये गये मार्ग पर चलना एवं सदैव उन्नति के लिए प्रयत्नशील रहना । यदि कोई काशी या मथुरा जाने के लिए केवल मुँह से बात ही करे और वहाँ जाने का कोई प्रयास न करे तो वह कभी-भी काशी या मथुरा नहीं पहुँच सकता ।

**चलो चलो सब कोई कहे, विरला पहुँचे कोय ।**
**एक कनक अरु कामिनी, दुर्गम घाटी दोय ॥**

मोक्षमार्ग पर चलने की बात तो सभी करते हैं परन्तु पहुँचते कोई विरले ही हैं । उस मार्ग पर जाने के लिए दो विघ्न आते हैं : एक काम और दूसरा कंचन या धन ।

मृत्यु के समय संसार की सारी धन-संपत्ति को यहीं छोड़कर जाना पड़ेगा । शरीर को भी यहीं छोड़कर जाना पड़ेगा । भगवान वेदव्यास कहते हैं कि धन, हीरे-मोती, आभूषण वगैरह सब यहीं पेटियों में रह जायेंगे । मकान, गाड़ी, हाथी-घोड़े भी यहीं रह जायेंगे । स्त्री-पुत्र, कुटुंब-परिवार वगैरह भी यहीं रह जायेंगे । संबंधीजन भी स्मशान तक जाकर तुम्हारी देह को जलाकर निराश होकर वापस आ जायेंगे । केवल धर्म ही तुम्हारे साथ रहेगा । धर्म ही जीव का सच्चा मित्र है जो मृत्यु के बाद भी साथ रहता है । अतः भगवान को याद करो । परमात्मा के नाम को खूब जपते रहो । **जो भी पदार्थ, प्रसंग, व्यक्ति या संबंध दिखाई देते हैं, वे स्वप्न की तरह मिथ्या हैं- ऐसा समझो । मिथ्यात्व की भावना दृढ़ करके संसार की आसक्ति छोड़ो ।** इस जगत में जानने जैसा, अनुभव करने जैसा एवं पाने जैसा जो है वह है आत्मा का ज्ञान । आज से ही निश्चय करो कि :

'इस जन्म में ही उस सत्यस्वरूप आत्मा को जानकर मुक्त हो जाऊँगा । मुझे दूसरा जन्म नहीं लेना है ।'

ऐसा निश्चय बारंबार करना चाहिए ।''

इस प्रकार पूज्य स्वामीजी ने मानव जीवन के मुख्य लक्ष्य एवं सद्गुरु की महत्ता के ऊपर प्रकाश डाला । शाश्वत एवं नश्वर का भेद समझाकर श्रोताओं की विवेक-बुद्धि को जागृत किया । भोग के बदले योगमय जीवन जीने की प्रेरणा दी । श्रद्धालुजनों को चौरासी के चक्कर से मुक्त होने का उपाय बताकर उसके लिए प्रयत्नशील रहने का निर्देश दिया ।

१५ जनवरी तक सिंगापुर के भक्तों को ज्ञान-गंगा में सराबोर करके दिनांक : १७ जनवरी को मलाया फेडरेशन के लिए प्रस्थान किया । उन्होंने जिस आत्मज्ञानरूपी खजाने को प्राप्त किया था, उससे बहुत लोग लाभान्वित होते थे । उनके मुखकमल से निःसृत सत्संग-गंगा अनेकों लोगों को शीतलता प्रदान करती एवं आत्मिक आनंद से पावन करती थी । संसार के क्षुद्र व्यवहार एवं कार्यों में अमूल्य मानव जन्म को बरबाद करते हुए अज्ञानी जीवों को मानव जीवन की महत्ता समझाते हुए उन्होंने कहा :

''कीमती मानव देह को पाकर, उसका सदुपयोग करके आत्मज्ञान नहीं पाओगे तो अंत में पछताने के सिवा कुछ भी हाथ न लगेगा ।''

पूज्य स्वामीजी सत्संग के दौरान बार-बार कहते :

**लख चौरासी जनम गँवाया ।**
**बड़े भाग मानुष तन पाया ॥**

''मानव जन्म बड़े भाग्य से मिलता है । यह मनुष्य

जन्म आत्मदर्शन, आत्मज्ञान, मुक्ति एवं अखंड आनंद की प्राप्ति के लिए ही मिला है... परमात्मा के साथ एक हो जाने के लिए मिला है । इस अमूल्य मानव देह को पाकर भी इसकी कद्र न की तो फिर मनुष्य जन्म पाने का क्या अर्थ है ? फिर तो जीवन व्यर्थ ही गया । यह मनुष्य जन्म फिर से मिलेगा कि नहीं, क्या पता ? कबीरजी ने कहा है :

**कबीरा मनुष्य जन्म दुर्लभ है,**
**मिले न बारंबार...**

कभी बचपन था, वह चला गया । जवानी आयी, वह भी जा रही है । वृद्धावस्था आयेगी, वह भी चली जायेगी... मृत्यु आयेगी तब रोना पड़ेगा । इस बात को यदि तुम अभी समझ लोगे और हमेशा याद रखोगे तो तुम्हें संसार की तृष्णाएँ नहीं सतायेंगी और तुम्हें अपने लक्ष्य का स्मरण बना रहेगा । भगवान को खूब याद करो । मन, बुद्धि एवं चित्त को भोग से हटाकर भगवान में लगा दो । भोग भोगने से भगवान कभी नहीं मिलते । भोग में रोग है, अतः भोगों को छोड़ो ।''

पूज्य स्वामीजी की मधुर अमृतवाणी से भक्तों एवं साधकों को अद्‌भुत प्रेम एवं आनंद की अनुभूति हुई ।

उसके पश्चात् पूज्य स्वामीजी ने क्वालालम्पुर में स्वामी विवेकानंद आश्रम में तीन दिन तक निवास किया । वहाँ भी सुबह दो घण्टे तक आसन, योग क्रियाएँ एवं प्राकृतिक उपचार बताते । शाम को ७ से ९ तक सनातन धर्म सभा मंदिर में सत्संग करते ।

सत्संग में पूज्य स्वामीजी ने लोगों को व्यवहार में निर्लेपता लाने के विषय में संकेत करते हुए कहा :

''जिस प्रकार सरोवर के पानी में खिला हुआ कमल का फूल पानी में रहने पर भी पानी से नहीं भीगता, उसी प्रकार संसार में रहो किन्तु संसार की मोह-माया का स्पर्श न होने दो । संत तुलसीदासजी ने भी कहा है :

**तुलसी जग में यूँ रहो, ज्यों रसना मुख माँहीं ।**
**खाती घी अरु तेल नित, फिर भी चिकनी नाहीं ।।**

(क्रमशः)

## तत्त्वदर्शन

# धर्म क्या है ?

*- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू*

सब धर्म मूल रूप से एक ही हैं । सब धर्मों में आता है कि अहिंसा धर्म है और हिंसा अधर्म है, फिर चाहे आप बौद्ध धर्म को मानो, चाहे जैन धर्म को मानो, चाहे सनातन हिन्दू धर्म को मानो या इस्लाम धर्म को मानो ।

इस्लाम धर्म में आता है : **ला इल्लाह इल्लिल्लाह ।** अल्लाह के सिवाय कोई नहीं है । फिर काफिर भी तो अल्लाह ही हुए, अतः उन्हें मारना-काटना, यह हिंसा हो गयी । सनातन धर्म में आता है : **ईश्वर सर्वत्र है, सबमें है, उसके सिवाय कुछ भी नहीं है ।** अतः मुसलमानों को मारना-काटना यह भी हिंसा ही हुई न ! हिन्दू सोचें कि 'जब तक मुसलमान नहीं मरेंगे तब तक शांति नहीं होगी' एवं मुसलमान सोचें कि 'जब तक हिन्दुओं को नहीं मार डालेंगे, तब तक शांति नहीं होगी...' तो दोनों मूर्ख हैं ।

अरे ! आप मच्छरों तक को तो धरती से हटा नहीं सकते और मनुष्यों को हटाने की डींग हाँक रहे हो ? सृष्टिकर्त्ता परमात्मा ने साँप, बिच्छू आदि जो जीव बनाये हैं उनको भी सदा के लिए धरती से कोई हटा नहीं सकता तो 'फलानी जाति हट जाय...' यह कैसे संभव हो सकता है ? किसीको मारकर फिर सुखी होंगे, यह मानना ही अधर्म है ।

जातियाँ भले भिन्न-भिन्न हैं, विचार भले

भिन्न-भिन्न हैं, मान्यताएँ भले भिन्न-भिन्न हैं, किन्तु उनकी गहराई में एक अभिन्न तत्त्व परमात्मा है- यह मानना धर्म है।

सब सुख चाहते हैं, शांति चाहते हैं, माधुर्य चाहते हैं, अतः दूसरों को सुख-शांति-माधुर्य मिले, ऐसी कोशिश करना धर्म है और इसकी जगह पर दूसरों को दुःख-अशांति और पीड़ा मिले-ऐसा प्रयास करना अधर्म है।

हिंसा पर उतारू न हो जायें, अशांति में डूब न जायें, काम में फिसल न जायें, क्रोध में तपकर झुलस न जायें, अपमान में निराश न हो जायें वरन् जीवन में नियंत्रण रहे, स्थिरता रहे एवं अविनाशी तत्त्व के साथ जीव का जो सनातन संबंध है, उसका ख्याल रहे- यह धर्म है।

छोटी-छोटी बातों में उलझकर बुद्धि छोटी हो जाती है। बड़े-में-बड़ी चीज जो परब्रह्म-परमात्मा है, उसके चिंतन-मनन के लिए अपनी मति को उसके अनुरूप बनाने का नाम धर्म है।

अनंतस्वरूप ईश्वरत्व का ज्ञान पाने के लिए उसकी पहचान करना आवश्यक है और उसकी पहचान होती है धर्म से। शास्त्रों में आता है: **धारयते इति धर्मः।** अर्थात् जो धारण करता है, वह धर्म है।

धर्म के चार चरण हैं : (१) चरित्र की पवित्रता (२) इन्द्रियों का संयम (३) मन में सद्भाव (४) सत्य का आचरण

हमारा चरित्र पवित्र हो, यह धर्म का प्रथम चरण है। बातें तो धर्म की सुनें एवं करें, किन्तु इन्द्रियों का संयम नहीं किया तो अधर्म हो जाता है। अतः इन्द्रियों का संयम धर्म का दूसरा चरण है। तीसरा चरण है, मन में सद्भाव। पापकर्म का कदापि लिहाज न रखें कि इतना-सा कर लिया तो क्या ? इतना-सा भोग लिया तो क्या ? मन में सदैव सद्भाव ही रखें। सदैव सत्य का पालन करें, यह धर्म का चौथा चरण है। 'इतना-सा झूठ बोल दिया तो क्या ?' नहीं... सत्य का पालन हो।

लोग पुण्यकर्म तो करते हैं, दान भी करते हैं, पूजा-पाठ भी करते हैं, कुंभ आदि में भी जाते हैं, तीर्थ, स्नानादि भी करते हैं, लेकिन साथ ही पाप का लिहाज रखते हैं तो इन सबका ऊँचा फल नहीं मिलता वरन् किया-कराया भी खर्च हो जाता है। पापकर्म का लिहाज करने से जीव का ब्रह्मभाव दब जाता है। अतः मानव को चाहिए कि वह अशुद्ध चिंतन, अशुद्ध आचरण, अशुद्ध कार्य से समझौता न करे, लिहाज न करे।

भारत में जो लोग पहले अपने घर में गौ के गोबर से चौका करने (लीपने) से पूर्व भोजन नहीं करते, वे ही जब अमेरिका जाते हैं और सबको जैसे-तैसे खाते-पीते देखते हैं तो सोचने लगते हैं कि 'सब खा रहे हैं, अपन नहीं खाते तो लोग अपने को बुद्धू मानेंगे...' ऐसा सोचकर वे भी जैसा-तैसा खाना-पीना शुरू कर देते हैं। लिहाज करते-करते वे मांसाहारी भी हो जाते हैं, शराबी हो जाते हैं एवं क्लबों में नाचना भी शुरू कर देते हैं। ऐसे ही जो लोग सत्संग में आते हैं, उनका थोड़ा-सा बीड़ी-तंबाकू छूटता है, गपशप छूटता है तो वे धीरे-धीरे भगत बन जाते हैं जबकि भगत थोड़ा-सा लिहाज करते-करते ठगी के रास्ते चल पड़ते हैं।

...तो धर्म यह है कि आप जहाँ हैं, वहाँ से ऊपर उठें, न कि नीचे गिरें। धर्म उठाता है एवं नीचे गिरने से बचाता है जबकि अधर्म नीचे गिराता है। रूपया-पैसा, पद-प्रतिष्ठा- ये सब बाह्य उन्नति हैं, क्षणिक हैं लेकिन चित्त की शांति, समता, प्रसन्नता एवं चैतन्य से चित्त की तदाकारता- यह वास्तविक उन्नति है। यही धर्म का असली फल है। धर्म का व्यावहारिक फल भौतिक उपलब्धियाँ हैं एवं पारमार्थिक फल आंतरिक उपलब्धियाँ हैं। धर्म दोनों क्षेत्रों में सफल होने की युक्ति बताता है।

श्रीकृष्ण से गीता सुनकर अर्जुन युद्ध के लिए तत्पर हो गया तो इतना बड़ा महाभारत का युद्ध हो गया। इस महायुद्ध में विशाल संख्या में नरसंहार हुआ तो क्या अधर्म हुआ ? गीता कर्म नहीं छुड़ाती। 'युद्ध नहीं करूँगा... संन्यासी बन जाऊँगा'- ऐसा कहनेवाले अर्जुन को गीता के धर्म ने युद्ध में प्रवृत्त किया। किन्तु साथ ही उसे कर्त्तापने के बोझ से भी मुक्त कर दिया। अपने सुख के लिए नहीं लेकिन **'बहुजनहिताय-बहुजनसुखाय'** कर्म किया जाता

है, वह धर्म है।

इसी प्रकार राजनीति है। राजनीति सब नीतियों का राजा है लेकिन उसमें जब अति स्वार्थ घुस जाता है तो वह बदनाम हो जाती है। धर्म के अनुकूल राजनीति निभाने की जो रीति है, ऐसी राजनीति सबके लिए मंगलकारी हो जाती है। यदि ऐसी नीति निभा ली जाए, तो हो जाती है समाज से प्रीति और अगर समाज की प्रीति मिल जाये तो समाज के स्वामी परमात्मा की प्रीति पाना भी आसान हो जाता है। किन्तु यदि राजनीति में अंधा स्वार्थ भर दिया, केवल भाई-भतीजों की ओर ही देखा, हजारों लोग देश में अन्न-पानी के लिए मोहताज हो रहे हों और आपने रूपये इकट्ठे करते-करते परदेश में भी थप्पियाँ जमा कर दीं तो यह राजनीति नहीं, आपकी मौतनीति है जो देर-सबेर चित्त की योग्यता को मार डालेगी। मति को भ्रष्ट कर दे, मार दे, वह व्यवहार अधर्म है और मति को निखार दे, वह व्यवहार धर्म है। मति को निखारकर मालिक से मिला दे, ऐसा व्यवहार धर्म है।

जैसे, आग का धर्म है तपना और बर्फ का धर्म है शीतल होना। ऐसे ही नेता का धर्म है प्रजा का पालन करना, सैनिक का धर्म है देश की रक्षा करना, प्रजा का धर्म है एक-दूसरे के साथ सहानुभूति रखकर जीना और मानवमात्र का धर्म है मानवता बरतना।

धर्म केवल बोलने की वस्तु नहीं, वरन् आचरण में लाने की वस्तु है। जिसका आचरण धर्मसंयुक्त होता है, उसकी उन्नति अवश्यंभावी है।

### सेवाधारियों एवं सदस्यों के लिए विशेष सूचना

(१) कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी प्रकार की नगद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अतः अपनी राशि मनीआर्डर या ड्राफ्ट द्वारा ही भेजने की कृपा करें।

(२) 'ऋषि प्रसाद' के नये सदस्यों को सूचित किया जाता है कि आपकी सदस्यता की शुरुआत पत्रिका की उपलब्धता के अनुसार कार्यालय द्वारा निर्धारित की जाएगी।

# अभाव का ही अभाव

*- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू*

कश्मीर में एक तर्करत्न, न्यायाचार्य पंडित रहते थे। उन्होंने चार पुस्तकों की रचना की थी, जिससे बड़े-बड़े विद्वान तक प्रभावित थे। इतनी विद्वत्ता होते हुए भी उनका जीवन अत्यंत सीधा-सादा एवं सरल था। उनकी पत्नी भी उन्हीं के समान सरल एवं सीधा-सादा जीवनयापन करनेवाली साध्वी थीं।

उनके पास संपत्ति के नाम पर एक चटाई, लेखनी, कागज एवं कुछ पुस्तकें तथा दो जोड़ी वस्त्र थे। कभी किसीसे कुछ माँगते न थे और न ही दान का खाते थे। उनकी पत्नी जंगल से मूँज काटकर लातीं, उससे रस्सी बनातीं और उसे बेचकर अनाज-सब्जी आदि खरीद लातीं। फिर भोजन बनाकर पति को प्रेम से खिलातीं और घर के अन्य काम-काज करतीं। पति को तो यह पता भी न रहता कि घर में कुछ है या नहीं। वे तो बस, अपने अध्ययन-मनन में मस्त रहते।

ऐसी महान् साध्वी स्त्रियाँ भी इस भारतभूमि में हो चुकी हैं।

धीरे-धीरे पंडितजी की ख्याति अन्य देशों में भी फैलने लगी। अन्य देशों के विद्वान लोग आकर उनके देश कश्मीर के राजा शंकरदेव से कहने लगे :

''राजन् ! जिस देश में विद्वान, धर्मात्मा, पवित्रात्मा दुःख पाते हैं, उस देश के राजा को पाप लगता है। आपके देश में भी एक ऐसे पवित्रात्मा विद्वान हैं, जिनके पास खाने-पीने तक का कोई

ठिकाना नहीं है, फिर भी आप उनकी कोई संभाल नहीं रखते ?''

यह सुनकर राजा स्वयं पंडितजी की कुटिया में पहुँच गया। हाथ जोड़कर उनसे प्रार्थना करने लगा :

''भगवन्! आपके पास कोई कमी तो नहीं है ?''

पंडितजी : ''मैंने जो चार ग्रंथ लिखे हैं, उसमें मुझे तो कोई कमी नहीं दिखती है। आपको कोई कमी लगती हो तो बताओ।''

राजा : ''भगवन् ! मैं शब्दों की, ग्रंथ की कमी नहीं पूछता हूँ, वरन् अन्न-जल-वस्त्र आदि घर के व्यवहार की चीजों की कमी पूछ रहा हूँ।''

पंडितजी : ''उसका मुझे कोई पता नहीं है। मेरा तो केवल एक प्रभु से नाता है। उसीके स्मरण में इतना तल्लीन रहता हूँ कि मुझे घर का कुछ पता ही नहीं रहता।''

जो भगवान की स्मृति में तल्लीन रहता है, उसके द्वार पर सम्राट स्वयं आ जाते हैं, फिर भी उसे कोई परवाह नहीं रहती।

राजा ने खूब विनम्र भाव से पुनः प्रार्थना की एवं कहा : ''भगवन्! जिस देश में पवित्रात्मा दुःखी होते हैं, उस देश का राजा पाप का भागी होता है। अतः आप बताने की कृपा करें कि मैं आपकी क्या सेवा करूँ ?''

जैसे ही पंडितजी ने ये वचन सुने कि तुरंत अपनी चटाई लपेटकर बगल में दबा ली एवं पुस्तकों की पोटली बाँधकर उसे भी उठाते हुए अपनी पत्नी से कहा :

''चलो देवी ! यदि अपने यहाँ रहने से इन राजा को पाप का भागी होना पड़ता हो, इस राज्य को लांछन लगता हो तो हम लोग कहीं और चलें। अपने रहने से किसीको दुःख हो, यह तो ठीक नहीं है।''

यह सुनकर राजा उनके चरणों में गिर पड़ा एवं बोला : ''भगवन् ! मेरा यह आशय न था, वरन् मैं तो केवल सेवा करना चाहता था।''

फिर राजा पंडितजी से आज्ञा लेकर उनकी धर्मपत्नी के समक्ष जाकर प्रणाम करते हुए बोला :

''माँ ! आपके यहाँ अन्न-जल-वस्त्रादि किसी भी चीज की कमी हो तो आज्ञा करें, ताकि मैं आप लोगों की कुछ सेवा कर सकूँ।''

पंडितजी की धर्मपत्नी भी कोई साधारण नारी तो नहीं थीं। वे भगवद्परायणा नारी थीं। सच पूछो तो नारी के रूप में मानो, साक्षात् नारायणी ही थीं। वे बोलीं :

''नदियाँ जल दे रही हैं, सूर्य प्रकाश दे रहा है, प्राणों के लिए आवश्यक पवन बह ही रहा है एवं सबको सत्ता देनेवाला वह सर्वसत्ताधीश परमात्मा हमारे साथ है ही, फिर कमी किस बात की ? राजन् ! शाम तक का आटा पड़ा है, लकड़ियाँ भी दो दिन जल सकें, इतनी हैं। मिर्च-मसाला भी कल तक का है। पक्षियों के पास तो शाम तक का भी ठिकाना नहीं होता, फिर भी वे आनंद से जी लेते हैं। मेरे पास तो कल तक का है, फिर मैं क्यों चिंता करूँ ? राजन् ! मेरे वस्त्र अभी इतने नहीं फटे कि मैं उन्हें न पहन सकूँ। बिछाने के लिए चटाई एवं ओढ़ने के लिए चादर भी है। ...और मैं क्या कहूँ ? मेरी चूड़ी अमर है और सबमें बसे हुए मेरे पति का तत्त्व मुझमें भी धड़क रहा है। मुझे अभाव किस बात का, बेटा !''

पंडितजी की धर्मपत्नी की दिव्यता को देखकर राजा भी गद्‌गद् हो उठा एवं चरणों में गिरकर बोला :

''माँ ! आप गृहिणी हैं कि तपस्विनी, यह कहना मुश्किल है। माँ ! मैं बड़भागी हूँ कि आपके दर्शन का सौभाग्य पा सका। आपके चरणों में मेरे कोटि-कोटि प्रणाम हैं !''

जो लोग परमात्मा का स्मरण निरंतर करते रहते हैं, उन्हें वेश बदलने की फुर्सत ही नहीं होती, जरूरत भी नहीं होती।

जो परमात्मा के चिंतन में तल्लीन हैं, उन्हें संसार के अभाव का पता ही नहीं होता। कोई सम्राट आकर उनका आदर करे तो उन्हें आकर्षण नहीं होता, हर्ष नहीं होता। ऐसे ही यदि कोई मूर्ख आकर अनादर कर दे तो शोक नहीं होता, क्योंकि हर्ष-शोक तो वृत्ति से भासते हैं। जिनकी वृत्ति परमात्मा के शरण चली गयी है, उन्हें हर्ष-शोक, सुख-दुःख के प्रसंग सत्य नहीं भासते तो डिगा कैसे सकते हैं। उन्हें अभाव में भी अभाव कैसे डिगा सकता है ?

*

# भगवान पतितपावन हैं

*- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू*

अवंतिका नगरी में एक स्वार्थी ब्राह्मण रहता था। वह था तो जाति से ब्राह्मण किन्तु उसने सारा जीवन न तो कभी संध्या की, न जप-तप किया और न साधु-समागम किया। उसकी पूरी जिंदगी दुष्कृत्यों एवं स्वार्थों में ही बीत गयी। वह ऐसा पामर ब्राह्मण था। उसका नाम था सुधन्वा।

सारी जिन्दगी दुष्कर्म करते-करते एक दिन उसका चित्त अत्यंत ऊब गया। तब वह जहाँ से नर्मदा का उद्गम हुआ है, उस अमरकंटक के पास स्थित महिषीपुरी क्षेत्र में गया। वहाँ उस क्षेत्र में कहीं तपी तप कर रहे थे तो कहीं जपी जप कर रहे थे। कहीं ब्राह्मण वेदमंत्र का उच्चारण कर रहे थे तो कहीं भक्त भगवन्नाम का कीर्तन कर रहे थे। इन सबको निहारता-निहारता वह मन-ही-मन खूब पश्चाताप करने लगा :

'मुझ अभागे ने ब्राह्मण होते हुए भी मद्यपान किया, माँस खाया, वेश्यागमन किया, और भी न जाने कितने-कितने दुष्कृत्य किये जिनकी कोई गिनती ही नहीं है। मैंने अपना मानव जन्म यूँ ही बरबाद कर दिया। दुनियाँ का ऐसा कोई दोष नहीं, जो मुझमें न हो। ये संत-महात्मा भगवान के जप-ध्यान में, भगवान के पावन गुणानुवाद में तल्लीन हैं और मैं ब्राह्मण होते हुए भी कितना अभागा हूँ !'

ऐसे पश्चाताप करते-करते वह पावन नर्मदा तट पर स्थित महिषीपुरी में एक महीने तक विचरण करता रहा।

एक बार वह किसी भक्तमंडली के साथ कहीं जा रहा था। मार्ग में एक भयंकर विषधर ने उसे काट लिया और वह बेहोश होकर गिर पड़ा। यह देखकर भक्तमंडली उसके पास दौड़ी-दौड़ी आयी। भक्त तो होते ही स्वभाव से दयालु हैं। उन्होंने उसके ऊपर तुलसीदल मिश्रित पानी छाँटा, किन्तु उसके प्राण-पखेरू वापस न लौटे। तब भक्तों ने कीर्तन किया, परमात्मा से प्रार्थना की एवं भगवन्नाम का जप किया, किन्तु सुधन्वा ब्राह्मण के प्राण पुनः शरीर में न लौटे।

उसके सूक्ष्म शरीर को यमपुरी ले जाया गया। चित्रगुप्त ने कहा :

''हे यमराजजी ! इस ब्राह्मण ने घोर पाप किये हैं, चमड़ा बेचा है, मद्यपान किया है, मांसादि का भक्षण किया है, आदि-आदि। इसे रौरव नरक के सिवाय और क्या सजा मिल सकती है ?''

यमराज ने दूतों को आदेश दिया कि इसे नंगे पैर तपते बालू पर चलाओ। फिर उबलते हुए तेल में डाल दो।

यमदूत उसे मारते-मारते घसीटकर ले गये एवं उबलते हुए तेल के कड़ाहे में डाला। किन्तु आश्चर्य ! ज्यों-ही सुधन्वा को उबलते हुए तेल के कड़ाहे में डाला, त्यों ही तेल शीतल हो गया !

यमपुरी का यह पहला ही चमत्कार था कि पापी को तेल में डालने पर तेल शीतल हो जाये ! अतः दूतों ने जाकर यमराजजी को इसकी खबर की। तब देवर्षि नारद का आवाहन किया गया। उनसे इस आश्चर्य का रहस्य जानने की प्रार्थना की गयी।

देवर्षि नारद ने कहा :

''सुधन्वा चाण्डाल के कृत्य जरूर करता था, इसमें कोई संदेह नहीं है। किन्तु अपने कृत्यों के लिए इसने अंत समय में खूब प्रायश्चित्त किया। प्रायश्चित्त से सारे पाप धुल ही जाते हैं। इसने अपने जीवन का अंतिम एक महीना सत्संगियों के बीच,

भगवद्भक्तों के बीच बिताया है। भगवन्नाम का जप-कीर्तन-ध्यान करनेवाले व्यक्तियों के बीच यह एक महीने तक रहा है, अतः इसके सारे पाप कट गये हैं। इसे रौरव नरक में भेजने की कोई जरूरत नहीं है। इसे केवल नरकों का दर्शन करवा देना भी पर्याप्त हो जायेगा। यह सुधन्वा फिर यक्ष योनि का अधिकारी है।''

यह कहकर देवर्षि नारद अंतर्धान हो गये। यमराज ने दूतों से कहा :

''दूतों ! धनभागी है यह सुधन्वा ! इसने पूरी जिंदगी भले ही दुष्कृत्यों में बिताई किन्तु अन्त समय में भगवद्भक्तों के बीच रहा एवं प्रायश्चित्त किया। यदि एक पामर, दुष्कृत्य करनेवाला सुधन्वा यक्ष योनि का अधिकारी हो गया तो जो व्यक्ति परमात्मा के तत्त्व को समझकर एक क्षण के लिए भी परमात्मा का ध्यान करे और वह परमात्मा को प्रिय हो जाये, तो इसमें क्या आश्चर्य है ?''

हम जब किसी भी प्रकार से ईश्वर की शरण लेते हैं, तब ईश्वर हिसाब-किताब लगाने नहीं बैठते कि : 'तू इतने दिन तक मुझे मुँह दिखाये बिना रहा, इतने हजार वर्ष तक तूने सूर्य की किरणें लीं, इतना पानी पिया, हवाएँ लीं, लाखों जन्मों से तूने मेरा अनादर किया। अब तू लाख वर्ष भजन कर तब मैं तुझे माफ करूँगा।' नहीं... भले हमने अनेक जन्मों तक उनकी सत्ता व शक्ति का दुरुपयोग करके सत्ता व शक्ति को अपना मान लिया हो, फिर भी जिस क्षण हम हृदय से कह देते हैं कि : 'हे नाथ ! हमारी भूल थी। सब तेरा था और हम भी तेरे हैं' तो वह हमें स्वीकार कर लेता है।

सुधन्वा जैसे चाण्डाल कृत्य करनेवाले व्यक्ति को भी यदि जप-ध्यान-कीर्तन-सत्संग करनेवाले व्यक्तियों का संग मिलता है तो वह यक्ष योनि का अधिकारी हो सकता है तो फिर खुद ही जप-ध्यान-कीर्तन एवं सत्संग करनेवाला व्यक्ति यक्ष योनि तो क्या, स्वयं परमेश्वर को भी पा ले, इसमें कोई आश्चर्य नहीं है।

*

*- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू*

शीत ऋतु व्यायाम, योगासन व प्राणायाम के लिए अत्यन्त उपयुक्त है। इस काल में की गई ये क्रियाएँ आगामी वर्ष भर शरीर को तन्दुरुस्त व मन को प्रसन्न रखती हैं। नित्य योगासन करनेवाले का शरीर व मन रुग्ण नहीं होता।

किसी योगनिष्ठ महापुरुष के मार्गदर्शन में रहकर 'त्रिकाल संध्या' में १०-१० प्राणायाम करने से बुद्धि में बुद्धिदाता का तेज प्रकाशित होने लगता है। यदि साधक छः माह सतत लगा रहे तो उसमें लोगों की मनोकामनाएँ पूर्ण करने का सामर्थ्य विकसित हो जाता है तो उसकी स्वयं की मनोकामनाओं का तो कहना ही क्या ? ऐसे साधक की मनौती मानने मात्र से ही लोगों के कार्य सफल होने लगते हैं।

लेकिन यहीं पर साधक को रुकना नहीं चाहिए, अपने को सिद्ध नहीं समझना चाहिए बल्कि बिना लोकेषणा के सतत अभ्यास में लगे रहना चाहिए।

इसमें सफल हुआ साधक ब्रह्मनिष्ठ सद्गुरु की कृपादृष्टि मात्र से अपने आत्मस्वरूप में जाग जाता है, अपने ईश्वरत्व का अनुभव कर लेता है। फिर वह पुरुष नहीं, महापुरुष कहलाता है। वह मनुष्य नहीं अपितु देवरूप हो जाता है, पूजने योग्य हो जाता है। उसकी उपस्थिति मात्र से इस लोक और परलोक के जीव शांति का अनुभव करते हैं।

ऐसे आत्मस्वरूप में स्थित राजा जनक जब नरक से गुजरते हैं तो नरक के जीव पुकार उठते

भगवद्भक्तों के बीच बिताया है । भगवन्नाम का जप-कीर्तन-ध्यान करनेवाले व्यक्तियों के बीच यह एक महीने तक रहा है, अतः इसके सारे पाप कट गये हैं । इसे रौरव नरक में भेजने की कोई जरूरत नहीं है । इसे केवल नरकों का दर्शन करवा देना भी पर्याप्त हो जायेगा । यह सुधन्वा फिर यक्ष योनि का अधिकारी है ।''

यह कहकर देवर्षि नारद अंतर्धान हो गये । यमराज ने दूतों से कहा :

''दूतों ! धनभागी है यह सुधन्वा ! इसने पूरी जिंदगी भले ही दुष्कृत्यों में बिताई किन्तु अन्त समय में भगवद्भक्तों के बीच रहा एवं प्रायश्चित्त किया । यदि एक पामर, दुष्कृत्य करनेवाला सुधन्वा यक्ष योनि का अधिकारी हो गया तो जो व्यक्ति परमात्मा के तत्त्व को समझकर एक क्षण के लिए भी परमात्मा का ध्यान करे और वह परमात्मा को प्रिय हो जाये, तो इसमें क्या आश्चर्य है ?''

हम जब किसी भी प्रकार से ईश्वर की शरण लेते हैं, तब ईश्वर हिसाब-किताब लगाने नहीं बैठते कि : 'तू इतने दिन तक मुझे मुँह दिखाये बिना रहा, इतने हजार वर्ष तक तूने सूर्य की किरणें लीं, इतना पानी पिया, हवाएँ लीं, लाखों जन्मों से तूने मेरा अनादर किया । अब तू लाख वर्ष भजन कर तब मैं तुझे माफ करूँगा ।' नहीं... भले हमने अनेक जन्मों तक उनकी सत्ता व शक्ति का दुरुपयोग करके सत्ता व शक्ति को अपना मान लिया हो, फिर भी जिस क्षण हम हृदय से कह देते हैं कि : 'हे नाथ ! हमारी भूल थी । सब तेरा था और हम भी तेरे हैं' तो वह हमें स्वीकार कर लेता है ।

सुधन्वा जैसे चाण्डाल कृत्य करनेवाले व्यक्ति को भी यदि जप-ध्यान-कीर्तन-सत्संग करनेवाले व्यक्तियों का संग मिलता है तो वह यक्ष योनि का अधिकारी हो सकता है तो फिर खुद ही जप-ध्यान-कीर्तन एवं सत्संग करनेवाला व्यक्ति यक्ष योनि तो क्या, स्वयं परमेश्वर को भी पा ले, इसमें कोई आश्चर्य नहीं है ।

*

*- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू*

शीत ऋतु व्यायाम, योगासन व प्राणायाम के लिए अत्यन्त उपयुक्त है । इस काल में की गई ये क्रियाएँ आगामी वर्ष भर शरीर को तन्दुरुस्त व मन को प्रसन्न रखती हैं । नित्य योगासन करनेवाले का शरीर व मन रुग्ण नहीं होता ।

किसी योगनिष्ठ महापुरुष के मार्गदर्शन में रहकर 'त्रिकाल संध्या' में १०-१० प्राणायाम करने से बुद्धि में बुद्धिदाता का तेज प्रकाशित होने लगता है । यदि साधक छः माह सतत लगा रहे तो उसमें लोगों की मनोकामनाएँ पूर्ण करने का सामर्थ्य विकसित हो जाता है तो उसकी स्वयं की मनोकामनाओं का तो कहना ही क्या ? ऐसे साधक की मनौती मानने मात्र से ही लोगों के कार्य सफल होने लगते हैं ।

लेकिन यहीं पर साधक को रुकना नहीं चाहिए, अपने को सिद्ध नहीं समझना चाहिए बल्कि बिना लोकेषणा के सतत अभ्यास में लगे रहना चाहिए ।

इसमें सफल हुआ साधक ब्रह्मनिष्ठ सद्गुरु की कृपादृष्टि मात्र से अपने आत्मस्वरूप में जाग जाता है, अपने ईश्वरत्व का अनुभव कर लेता है । फिर वह पुरुष नहीं, महापुरुष कहलाता है । वह मनुष्य नहीं अपितु देवरूप हो जाता है, पूजने योग्य हो जाता है । उसकी उपस्थिति मात्र से इस लोक और परलोक के जीव शांति का अनुभव करते हैं ।

ऐसे आत्मस्वरूप में स्थित राजा जनक जब नरक से गुजरते हैं तो नरक के जीव पुकार उठते

हैं : ''जरा ठहरो... जरा ठहरो... बड़ी शांति मिल रही है।''

अपने आत्मस्वरूप में स्थित महापुरुषों द्वारा समस्त लोक के समस्त प्राणियों को पोषण मिलता है। उनके द्वारा किसीका अहित नहीं होता। ऐसे महापुरुषों का सान्निध्य प्राप्त कर उनके मार्गदर्शन में कोई साधना करे तो वह भी परमात्मपद की यात्रा में निर्विघ्न सफल हो सकता है।

विवेकानन्द ठीक ही कहते थे : ''हर एक लाख लोगों में एक व्यक्ति भी अपने स्वरूप में प्रतिष्ठित हो जाये तो उसकी उपस्थिति मात्र से सारा संसार एक-आध घड़ी में स्वर्ग में बदल सकता है।''

## गुरुसेवा का महत्त्व

मानव जीवन में सबसे अमूल्य चीज कोई है तो वह है समय। उसका एक भी क्षण व्यर्थ नहीं गँवाना चाहिए। प्रत्येक क्षण का उपयोग गुरुसेवा में करें और सेवा करते-करते समय बचे तो उसको गुरु के स्मरण में, गुरुप्रीति में लगायें। समय का सर्वश्रेष्ठ उपयोग यही है। ऐसा करने से जीवन में आलस्य-प्रमाद को स्थान नहीं मिलेगा और संकल्प-विकल्पों का जाल अपने-आप कटता जाएगा।

गुरुसेवा का रहस्य न जाननेवाले साधक जिस सेवा को जब करना चाहिए तब नहीं करते हैं और जब करते हैं तब बोझा समझकर करते हैं और सेवा में लापरवाही करते हैं। जब सेवा करने का अवसर मिलता है तब दिल लगाकर नहीं करते, कुशलता नहीं बरतते, विवेक का उपयोग नहीं करते। ऐसी सेवा मात्र कार्य रूप से हो पाती है एवं उसमें राग और कर्त्तापने का भाव रह जाता है। संकल्प-विकल्प नष्ट नहीं होते। मूर्खता, अविवेक एवं राग-द्वेष के कारण चौरासी के चक्र से मुक्त नहीं हो पाते। अतः साधक को गुरुसेवा सावधानीपूर्वक करनी चाहिए।

*- ब्रह्मलीन स्वामी माधवतीर्थ*

## सत्य के समान कोई धर्म नहीं

*- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू*

संतों ने ठीक ही कहा है :

**सत्य समान तप नहीं, झूठ समान नहीं पाप ।**
**जाके हिरदे साँच है, ताके हिरदे आप ।।**

'सत्य के समान कोई तप नहीं है एवं झूठ के समान कोई पाप नहीं है। जिसके हृदय में सच्चाई है, उसके हृदय में स्वयं परमात्मा निवास करते हैं।'

गोस्वामी तुलसीदासजी ने भी कहा है :

**धरम न दूसर सत्य समाना।**

'सत्य के समान दूसरा कोई धर्म नहीं है।'

मोहनदास करमचंद गाँधी ने अपने विद्यार्थी काल में 'सत्यवादी राजा हरिश्चन्द्र' नामक नाटक देखा। उनके जीवन पर इसका इतना प्रभाव पड़ा कि उन्होंने दृढ़ निर्णय कर लिया : 'कुछ भी हो जाए, मैं सदैव सत्य ही बोलूँगा।'

उन्होंने सत्य को ही अपना जीवनमंत्र बना लिया।

एक बार पाठशाला में खेलकूद का कार्यक्रम चल रहा था। उनकी खेलकूद में रुचि नहीं थी, अतः उपस्थिति देने के लिए वे जरा देर से आये। देर से आया देखकर शिक्षक ने पूछा :

''इतनी देर से क्यों आये ?''

मोहनलाल : ''खेलकूद में मेरी रुचि नहीं है और घर पर थोड़ा काम भी था, इसलिए देर से आया।''

शिक्षक : ''तुम्हें एक आने का अर्थदण्ड देना पड़ेगा।''

दण्ड सुनकर मोहनलाल रोने लगे। शिक्षक ने उन्हें रोते देखकर कहा :

''तुम्हारे पिता करमचंद गाँधी तो धनवान आदमी हैं। एक आना दण्ड के लिए क्यों रोते हो ?''

मोहनलाल : ''एक आने के लिए नहीं रोता किन्तु मैंने आपको सच-सच बता दिया, फिर भी आप मुझ पर विश्वास नहीं करते। मैंने बहाना नहीं बनाया है, फिर भी आपको मेरी बात पर विश्वास नहीं होता इसीलिए मुझे रोना आ गया।''

मोहनलाल की सच्चाई देखकर शिक्षक ने उन्हें माफ कर दिया। ये ही विद्यार्थी मोहनलाल आगे चलकर महात्मा गाँधी के रूप में करोड़ों-करोड़ों लोगों के दिलों-दिमाग पर छा गये।

एक बार स्कूल में विद्यार्थियों के अंग्रेजी ज्ञान की परीक्षा के लिए शिक्षा-विभाग के कुछ अंग्रेज इन्स्पेक्टर आये हुए थे। उन्होंने कक्षा के समस्त विद्यार्थियों को एक-एक कर पाँच शब्द लिखवाये। अचानक कक्षा के अध्यांपक ने एक बालक की कॉपी देखी जिसमें एक शब्द गलत लिखा था। अध्यापक ने उस बालक को अपना पैर छुआकर इशारा किया कि वह पास के लड़के की कॉपी से अपना गलत शब्द ठीक कर ले। ऐसे ही उन्होंने दूसरे बालकों को भी इशारा करके समझा दिया और सबने अपने शब्द ठीक कर लिये, पर उस बालक ने कुछ न किया।

इन्स्पेक्टरों के चले जाने पर अध्यापक ने भरी कक्षा में उसे डाँटा और झिड़कते हुए कहा कि इशारा करने पर भी अपना शब्द ठीक नहीं किया ? कितना मूर्ख है !

इस पर बालक ने कहा : ''अपने अज्ञान पर पर्दा डालकर दूसरे की नकल करना सच्चाई नहीं है।''

अध्यापक : ''तुमने सत्य का यह व्रत कब लिया और कैसे लिया ?''

बालक ने उत्तर दिया : ''राजा हरिश्चन्द्र के नाटक को देखकर, जिन्होंने सत्य की रक्षा के लिए अपनी पत्नी, पुत्र और स्वयं को बेचकर अपार कष्ट सहते हुए भी सत्य की रक्षा की थी।''

तब मित्रगण बोल उठे : ''भाई ! नाटक तो नाटक होता है। उसमें प्रदर्शित किसी आदर्श से बँधकर उसे जीवन में घटाना ठीक नहीं।''

इस पर उस बालक ने कहा : ''ऐसा न कहो मित्र ! पक्के इरादे से सब कुछ हो सकता है। मैंने उसी नाटक को देखकर जीवन में सत्य पर चलने का निश्चय किया है। अतः मैं सत्य की अपनी टेक कैसे छोड़ दूँ ?''

यह बालक कोई और नहीं बल्कि मोहनलाल करमचंद गाँधी ही थे।

सत्य के आचरण से अंतर्यामी ईश्वर प्रसन्न होते हैं, सत्यनिष्ठा दृढ़ होती है एवं हृदय में ईश्वरीय शक्ति प्रगट हो जाती है। सत्यनिष्ठ व्यक्ति के सामने फिर चाहे कैसी भी विपत्ति आ जाए, वह सत्य का त्याग नहीं करता।

**सब धर्म अपने पूर्ण कर, छोटे-बड़े से या बड़े।**
**मत सत्य से तू डिग कभी, आपत्ति कैसी ही पड़े ?**

सत्य का आचरण करनेवाला निर्भय रहता है। उसका आत्मबल बढ़ता है। असत्य से सत्य अनंतगुना बलवान है। जो बात-बात में झूठ बोल देते हैं, उनका विश्वास कोई नहीं करता है। फिर एक झूठ को छिपाने के लिए सौ बार झूठ भी बोलना पड़ता है। अतः इन सब बातों से बचने के लिए पहले से ही सत्य का आचरण करना चाहिए। सत्य का आचरण करनेवाला सदैव सबका प्रिय हो जाता है। शास्त्रों में भी आता है :

**सत्यं वद। धर्मं चर।**

सत्य बोलो। धर्म का आचरण करो। जीवन की वास्तविक उन्नति सत्य में ही निहित है।

*

**महत्त्वपूर्ण निवेदन :** सदस्यों के डाक पते में परिवर्तन अगले अंक के बाद के अंक से कार्यान्वित होगा। जो सदस्य ७४ वें अंक से अपना पता बदलवाना चाहते हैं, वे कृपया दिसम्बर तक अपना नया पता भिजवा दें।
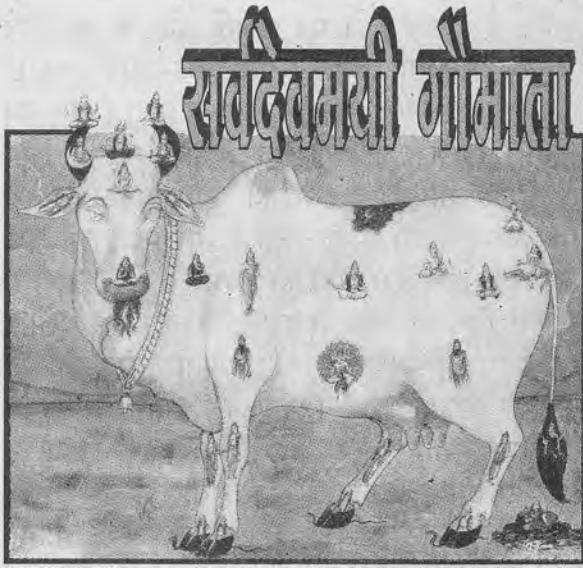
# गौमाता : रोग-दोषनिवारिणी

[गतांक का शेष]

**(१२) प्रसव-पीड़ा** : अत्यधिक प्रसव-पीड़ा होने तथा बच्चा उत्पन्न होने में देर लगने पर ऑपरेशन कराने की दशा उत्पन्न हो जाती है। ऐसी प्रसूतिका को घास चरनेवाली देशी गाय के ताजे गोबर का रस एक चम्मच पिलाने पर बच्चा जल्दी पैदा हो जाता है।

उपरोक्त तथ्यों से स्पष्ट है कि गौमाता एक चलता-फिरता तथा मुफ्त दवा देनेवाला औषधालय है। ऐसे प्राणी की रक्षा करना सभी भारतवासियों का परम धर्म है।

## गौमाता : ऊर्जा का अक्षय स्रोत

**लोकान् सिसृक्षुणा पूर्णा गावः सृष्टाः स्वयम्भू वा।**
**वृत्यर्थ सर्वभूतानां तस्मात् ता मातरः स्मृताः॥**

(महाभारत० अनु० १४५)

गौमाता मातृशक्ति की साक्षात् प्रतिमा है । जिस दिन विश्व में गाय नहीं रहेगी, उस दिन विश्व मातृशक्ति से वंचित हो जाएगा ।

आज विश्व में ऊर्जा के स्रोतों की खोज की आपाधापी मची हुई है । यदि विश्व के देशों में किसी एक मद में सबसे अधिक खर्च होता है तो वह ऊर्जा ही है ।

कम ऊर्जावाले देशों की आर्थिक स्थिति हमेशा चरमराई ही रहती है। भारत भी पेट्रोलियम पदार्थों से प्राप्त ऊर्जा की होड़ में लगा ही रहता है तथा इसकी अर्थव्यवस्था भी छिन्न-भिन्न रहती है। यह हालत तब है जबकि अभी न तो यह विकसित औद्योगिक देश है और न ही इसमें वाहनों की संख्या विकसित देशों के बराबर है।

औद्योगीकरण की दौड़ में हम ऊर्जा के अक्षय स्रोतों की अनदेखी कर रहे हैं। यह अक्षय स्रोत गाय है । गाय से प्राप्त ऊर्जा का यदि ठीक तरह से आकलन करें तो पता चलेगा कि गाय से प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप में हमें जितनी ऊर्जा मिल रही है, उतनी किसी भी एक साधन (पेट्रोलियम, बिजली, कोयला तथा लकड़ी आदि) से नहीं मिल रही है। दूसरे, गाय से प्राप्त ऊर्जा सर्वसुलभ, सबसे सस्ती तथा प्रदूषणरहित है।

गाय से हमें निम्न रूपों में ऊर्जा मिल रही है :

१. गौपुत्र बैलों से कृषि-श्रम के रूप में ।
२. बैलों से परिवहन के लिए।
३. गोबर से ईंधन के रूप में।
४. गोबर से बायोगैस के रूप में।
५. मनुष्य, पशु-पक्षी तथा वनस्पतियों के पोषण के लिए दूध तथा खाद के रूप में।

**(१) कृषि-श्रम के रूप में** : देश में कितना ही विकास हो जाए परंतु खेती बैल के कंधे पर ही टिकी रहेगी। ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि कृषिशक्ति का ३ प्रतिशत ट्रैक्टर से, १२ प्रतिशत मानवशक्ति से, ३२ प्रतिशत डीजल-पेट्रोल व बिजली से तथा ५१ प्रतिशत बैल की शक्ति से आता है।

बैलों से कृषिशक्ति के रूप में लगभग ५३,००० मेगावाट बिजली के बराबर ऊर्जा प्राप्त होती है । इससे करोड़ों टन पेट्रोलियम पदार्थों की बचत होती है । यदि सभी कृषि कार्य यंत्रों से होने लगें तो पेट्रोलियम पदार्थों की खपत दसगुनी बढ़ जाएगी । (क्रमशः)

# शीत ऋतुचर्या

– वैद्यराज अमृतभाई

## आहार

शीत ऋतु में स्वाभाविक रूप से जठराग्नि तीव्र रहती है, अतः पाचनशक्ति प्रबल रहती है। ऐसा इसलिए होता है कि हमारे शरीर की त्वचा पर ठण्डी हवा और ठण्डे वातावरण का प्रभाव बारंबार पड़ते रहने से शरीर के अन्दर की उष्णता बाहर नहीं निकल पाती और अन्दर-ही-अन्दर इकट्ठी होकर जठराग्नि को प्रबल करती है। इससे हमारा खाया-पिया भारी आहार भी ठीक से हजम हो जाता है और शरीर को बल प्राप्त होता है।

इस ऋतु का सही और पूरा लाभ उठाने के लिए हमें पूरे शीतकाल में पौष्टिक, शक्तिवर्द्धक और गुणकारी पदार्थों का सेवन करना चाहिए।

जो समर्थ और सम्पन्न हों, वे शुद्ध घी से बने पौष्टिक पदार्थ, सूखे मेवे, देशी घी की जलेबी और दूध, घी और लौकी व मूँग की दाल का हलवा, उड़द व चावल की खीर, रबड़ी, मलाई आदि स्निग्ध पदार्थों एवं मौसम के फलों का सेवन करें।

साधारण आर्थिक स्थिति के लोग रात को भिगोये हुए देशी काले चने सुबह नाश्ते के रूप में खूब चबा-चबाकर खाएँ। केले, मूँगफली, ठण्डे दूध के साथ शहद, आँवला, गाजर, अमरूद आदि तथा रात को सोते समय दूध का सेवन करें।

'चरकसंहिता' का कहना है कि शीतकाल में अग्नि के प्रबल होने पर उसके बल के अनुसार पौष्टिक और भारी आहाररूपी ईंधन नहीं मिलने पर यह बढ़ी हुई अग्नि शरीर में उत्पन्न धातु (रस) को जलाने लगती है और वात कुपित होने लगता है। यह जठराग्नि का स्वभाव है कि यह प्रबल होकर आहाररूपी ईंधन को जलाती है यानी पचाती है और आहार के अभाव में दोषों को पचाती है यानी जलाती है। एक दिन का उपवास करने से यही लाभ होता है बशर्ते उपवास में निराहार रहा जाए यानी फलाहार के नाम पर भोज्य पदार्थ न खाए जायँ। दोषों के अभाव में या दोषों को जलाने के बाद यह अग्नि शरीर के धातुओं को जलाने लगती है और धातुओं का अभाव हो जाने पर प्राणों को पचाने यानी जलाने लगती है। अतः जठराग्नि प्रबल होने पर यानी खूब अच्छी भूख लगने पर कुछ न मिले तो भले ही चना-चबेना या कोई फल खा लें, पर भूखे नहीं रहना चाहिए।

## विहार

ठण्ड में शीत से बचाव करना बहुत जरूरी है, ताकि शीत का अति योग न होने पाए। शरीर पर तेल की मालिश करना, उबटन लगाना, कसरत करना या योगासनों का अभ्यास करना, धूप-स्नान करना, प्रातः वायुसेवन करना, गर्म वस्त्र धारण करना, सोने-ओढ़ने के लिए गर्म कपड़ों, रजाई, कम्बल आदि का प्रयोग करना, शरीर पर घिसे हुए अगर का लेप करना, ताजे जल से स्नान करना... ये सब कार्य उचित विहार में शामिल हैं। जिनकी तासीर ठण्डी हो, वे कुनकुने गर्म जल से स्नान करें। स्नान के लिए ज्यादा गर्म पानी का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

## पथ्य

इस ऋतु में पथ्य (सेवन योग्य) पदार्थों का सेवन अवश्य करना चाहिए क्योंकि दूसरी ऋतुओं में इन पदार्थों का सेवन करना उतना लाभकारी नहीं होता जितना इस ऋतु में होता है। इस ऋतु में पौष्टिक व बलवर्द्धक पदार्थ जैसे उड़द, घी, चावल

की खीर, मक्खन, मिश्री, रबड़ी, मट्ठा, तिल, हरी शाक-सब्जी, अदरक, सोंठ, पीपर, मेथी, मुनक्का, अंजीर, गाजर एवं मौसंबी आदि फलों का सेवन करना चाहिए। इस ऋतु में शहद का सेवन अवश्य करना चाहिए। बाजारू बनावटी शहद नहीं किन्तु मधुमक्खियों का बनाया हुआ शुद्ध शहद मिले तो उसका सेवन करना चाहिए। हेमन्त ऋतु में बड़ी हरड़ का चूर्ण और सोंठ का चूर्ण समभाग मिलाकर और शिशिर ऋतु में बड़ी हरड़ का चूर्ण समभाग पीपर (पिप्पली या पीपल) चूर्ण के साथ प्रातः सूर्योदय के समय अवश्य सेवन करना चाहिए। दोनों मिलाकर ५ ग्राम लेना पर्याप्त है। इसे पानी में घोलकर पी जाएँ। यह उत्तम रसायन है। लहसुन की ३-४ कलियाँ या तो ऐसे ही निगल जाया करें या चबाकर खा लें या दूध में उबालकर खा लिया करें।

जो सम्पन्न और समर्थ हों, वे इस मौसम में केसर, चन्दन और अगर घिसकर शरीर पर लेप करें। यह शरीर को स्वस्थ और सुगन्धित रखता है। तेल की मालिश तो करना ही चाहिए क्योंकि तेल त्वचा को स्वस्थ, चिकनी और चमकदार रखता है, शरीर की खुश्की दूर कर अंग-प्रत्यंग को बल देता है और वात-व्याधियों से शरीर की रक्षा करता है।

## अपथ्य

इस ऋतु में अधिक शीत सहना, बहुत ठण्डा पानी पीना, तीखी तेज ठण्डी हवा लेना, अल्पाहार करना, उपवास रखना, रूखे, कड़वे, कसैले, ठण्डे व बासी पदार्थों का सेवन करना, शीत प्रकृति के पदार्थों का अति सेवन करना, अनियमित ढंग से आहार लेना और सोना आदि अपथ्य हैं।

शीतकाल के इस सुअवसर का पूरा लाभ उठाएँ और शरीर को पुष्ट, सुडौल व स्वस्थ बनाएँ ताकि ग्रीष्म और वर्षाकाल में भी आप स्वस्थ बने रह सकें। यही ऋतु स्वास्थ्य-रक्षा करने में हमें सहयोग देती है। इसमें हमें स्वास्थ्यरूपी धन इतना कमा लेना चाहिए कि वर्ष के शेष आठ माह तक यह कमाई हमारे काम आती रहे।

# संत च्यवनप्राश

च्यवनप्राश विशिष्ट आयुर्वेदीय उत्तम औषध एवं पौष्टिक खाद्य है, जिसका प्रमुख घटक आँवला है। जठराग्निवर्धक और बलवर्धक च्यवनप्राश का सेवन अवश्य करना चाहिए।

किसी-किसी की धारणा है कि च्यवनप्राश शीत ऋतु में ही सेवन करना चाहिए, परंतु यह सर्वथा भ्रान्त मान्यता है। इसका सेवन सब ऋतुओं में किया जा सकता है। ग्रीष्म ऋतु में भी वह गरम नहीं करता, क्योंकि इसका प्रधान द्रव्य आँवला है, जो शीतवीर्य होने से पित्तशामक है।

**लाभ :** बालक, वृद्ध, क्षत-क्षीण, स्त्री-संभोग से क्षीण, शोषरोगी, हृदय के रोगी और क्षीण स्वरवाले को इसके सेवन से काफी लाभ होता है। इसके सेवन से खाँसी, श्वास, प्यास, वातरक्त, छाती का जकड़ना, वातरोग, पित्तरोग, शुक्रदोष और मूत्ररोग आदि नष्ट हो जाते हैं। यह स्मरणशक्ति और बुद्धिवर्धक तथा कान्ति, वर्ण और प्रसन्नता देनेवाला है तथा इसके सेवन से बुढ़ापा देरी से आता है। यह फेफड़े को मजबूत करता है, दिल को ताकत देता है, पुरानी खाँसी और दमा में बहुत फायदा करता है तथा दस्त साफ लाता है। अम्लपित्त में यह बड़ा फायदेमंद है। वीर्यविकार और स्वप्नदोष नष्ट करता है। इसके अतिरिक्त यह राजयक्ष्मा (टी. बी.) और हृदयरोगनाशक तथा भूख बढ़ानेवाला है। संक्षिप्त में कहा जाये तो पूरे शरीर की कार्यविधि को सुधार देनेवाला है।

**मात्रा :** दूध या नाश्ते के साथ १५ से २० ग्राम सुबह-शाम। बच्चों के लिए ५ से १० ग्राम की मात्रा।

च्यवनप्राश केवल बीमारों की ही दवा नहीं है, बल्कि स्वस्थ मनुष्यों के लिए उत्तम खाद्य भी है। आँवले में वीर्य की परिपक्वता कार्तिक पूर्णिमा के बाद आती है। लेकिन जानने में आता है कि कुछ बाजारू फार्मसियाँ धन कमाने व च्यवनप्राश की माँग पूरी करने के लिए हरे आँवले की अनुपलब्धता में आँवला पावडर से ही च्यवनप्राश बनाती हैं और

कहीं-कहीं तो स्वाद के लिए शकरकंद का भी प्रयोग किया जाता है। कैसी विडंबना है कि धन कमाने के लिए ऐसे स्वार्थी लोगों द्वारा कैसे-कैसे तरीके अपनाये जाते हैं ! ऐसे लोगों का लक्ष्य केवल पैसा कमाना होता है, जिनका मानव के स्वास्थ्य के साथ कोई संबंध ही नहीं होता।

करोड़ों रूपये कमाने की धुन में लाखों-लाखों रूपये प्रचार में लगानेवाले लोगों को यह पता ही नहीं चलता कि लोहे की कड़ाही में च्यवनप्राश नहीं बनाया जाता। उन्हें यह भी नहीं पता कि ताजे आँवलों से और कार्तिक पूनम के बाद ही वीर्यवान च्यवनप्राश बनता है। २४ वनस्पतियों में उसे उबाला जाता है और ३२ पौष्टिक चीजें (शहद, घी, इलायची आदि) डालकर कुल ५६ वस्तुओं के मेल से असली च्यवनप्राश बनाया जाता है।

कार्तिक पूनम से पहले ही जो च्यवनप्राश बनाकर बेचते हैं और लाखों रूपये विज्ञापन में खर्च करते हैं, वे करोड़ों रूपये कमाने के सपने साकार करने में ही लगे रहते हैं।

इसके विपरीत सूरत, दिल्ली व अमदावाद समिति द्वारा 'न नफा न नुकसान' इस सेवाभाव से च्यवनप्राश में इन ५६ प्रकार की वस्तुओं के अतिरिक्त हिमालय से लायी गयी वज्रबला (सप्तधातुवर्द्धनी वनस्पति) भी डालकर च्यवनप्राश बनाया गया है, जो केवल साधक परिवार के लिए है।

विधिवत् ५६ प्रकार की वस्तुओं से युक्त शुद्ध एवं पौष्टिक यह च्यवनप्राश जरूर खाना चाहिए।

५६ वस्तुओं से, वीर्यवान आँवलों से बने इस च्यवनप्राश का नाम रखते हैं **'संत च्यवनप्राश'**। अन्य समितियाँ भी यह सेवाकार्य अगर करना चाहें तो 'न नफा न नुकसान' भाव से बनाकर आपस में बाँट लें।

# सुवर्ण मालती और रजत मालती

सुवर्ण मालती और रजत मालती शीतकाल में सेवन करने योग्य, आरोग्यतावर्धक और पुष्टिकारक हैं। शीतकाल में वातावरण के प्रभाव से जठराग्नि एवं शरीर की धातु बहुत तेज होती है, इसलिए कोई भी पौष्टिक एवं भारी पदार्थ का पूर्ण पाचन हो जाता है।

## सुवर्ण मालती

यह गोली सुवर्णभस्म, मोतीभस्म, यशदभस्म, हिंगुल, सफेद मिर्च और मक्खन को नींबू के रस से भावित करके बनाई गई है।

**गुण** : यह औषधि बालक, वृद्ध, युवक, सगर्भा स्त्री आदि सबके लिए हितकर है। सब ऋतु में और सब प्रदेश में सब प्रकार की प्रकृतिवाले लोग निर्भयतापूर्वक ले सकें- ऐसा यह योग है।

उसमें रसायन, बल्य, क्षयघ्न, कीटाणुनाशक तथा रक्तप्रसादन गुण विशेष रूप से हैं। वातवह मण्डल, सहस्रारचक्र, नाड़ीचक्र से लेकर सूक्ष्माति-सूक्ष्म अवयव तक, सबको बल देने का महत्त्वपूर्ण गुण इस रसायन में है।

यह खास तौर पर उदरकला पर अपना प्रभाव दिखाती है। यह वायु का नाश करके आँतों की शिथिलता को दूर करती है। पाचकरसों को बढ़ाती है और अजीर्ण से होनेवाले ज्वर, जीर्णज्वर, विषमज्वर, कफज्वर, धातुगत ज्वर आदि रोगों का नाश करती है।

यह रसायन टी.बी., यकृत (Liver), प्लीहा के दोष, मंदाग्नि, स्त्रियों के प्रदर रोग, मानसिक निर्बलता, पुरानी खाँसी, धातुक्षीणता, हृदयरोग, मस्तकशूल आदि में हितकर है।

पुराने किसी भी रोग में धैर्य और शांत चित्त से इस योग का सेवन करने से लाभ होता ही है। किसी भी रोग से या अति व्यायाम, अति वीर्यनाश, अति परिश्रम या वृद्धावस्था आदि किसी भी हेतु से आयी हुई कमजोरी को यह रसायन दूर करता ही है।

**मात्रा और अनुपान** : १ से २ गोली दिन में दो बार शहद या च्यवनप्राशावलेह या सितोपलादि चूर्ण अथवा शहद के साथ लें। बच्चों के लिए एक चौथाई से एक गोली।

## रजत मालती

**गुण** : रक्त को बढ़ाकर मांसपेशियों को ताकत देती है। आयुष्य, वीर्य, बुद्धि और कांति को बढ़ाती है। क्रोध, श्रम, पढ़ाई, रात्रि जागरण, मनन, सूर्यताप, शोक, भय आदि के अति सेवन से होनेवाली वातवृद्धि में खास फायदा देती है। मूत्रपिंड, दिमाग, वातवहनाड़ी और वात-पित्त दोष पर शामक प्रभाव दिखाती है जिससे पक्षाघात (लकवा), खंज, पंगु, शुक्रक्षयज व्याधि, एसिडिटी और नेत्ररोग, पांडु, यकृत (Liver) शोथ, हिस्टीरिया, ऐंठन, वृद्धावस्था के व्याधि आदि में विशेष फायदा देती है। गुप्त रोग और स्त्रोतस संकोचन के कारण जो नपुंसकता आती है, इसको भी मिटाती है।

**अनुपान** : शहद, मलाई, मिश्री, दूध, मक्खन-आँवले का मुरब्बा या गुलकंद।

डायबिटीज में अद्रक के रस में, उन्माद (पागलपन) तथा शिरोरोग में इलायची और विरेचन के साथ।

**मात्रा** : बच्चों के लिए आधी गोली एक बार। बड़ों के लिए एक से दो गोली दो बार।

*एकान्त यानी एक में, एक परब्रह्म परमात्मा में सारी वृत्तियों का अन्त। कुछ नादान लोग एकान्त का मतलब ऐसा स्थान समझते हैं जहाँ कोई बोलने-टोकनेवाला न हो। यह मन की चालाकी है। कई श्रेष्ठ समझे जानेवाले साधक मन के इस चक्कर में पड़कर अपना पतन स्वयं आमंत्रित करते हैं। फलस्वरूप वे ऐसी खाई में गिरते हैं जहाँ से निकलना फिर उनके वश की बात नहीं होती। अतः साधक को सदैव सावधान रहना चाहिए।*

दिनांक : २२-७-'९८

परम पूजनीय संत श्री आसारामजी बापू !
हरि ॐ...

आपके आश्रम द्वारा प्रकाशित 'ऋषि प्रसाद' मासिक के माध्यम से आप अपना प्रवचनरूपी प्रसाद घर-घर भिजवाकर, जनता का जो मार्गदर्शन कर रहे हैं, उसके लिये समस्त भारत ही नहीं, बल्कि पूरा विश्व आपको कोटि-कोटि धन्यवाद देता है। आज के भारत की युवा पीढ़ी जो पश्चिमी सभ्यता से बड़ी तेजी से प्रभावित होती जा रही है, वह 'ऋषि प्रसाद' में आपके सत्संग-प्रवचनों को पढ़कर, शिविरों में देख-सुन व समझकर निश्चय ही आत्मोन्नति के मार्ग पर चल पड़ेगी, ऐसा हमें विश्वॅास है। अपने अमृतरूपी प्रवचनों, शक्तिपात शिविरों व अन्य दैवी प्रयासों द्वारा भारतीय लोगों को, उनके अतीत की याद दिलाकर तथा उच्च कोटि के संत-महापुरुषों के जीवन पर प्रकाश डालकर, आत्मशांति प्रदान करने का जो पवित्र कार्य आप कर रहे हैं, वह बड़ा सराहनीय है। भगवान से हमारी प्रार्थना है कि वह आपको स्वास्थ्य और दीर्घ आयु प्रदान करे ताकि इस समाज के ज्यादा-से-ज्यादा लोगों को जनसेवाकार्य हेतु आप प्रेरित करते रहें।"

*- डॉ. दीपक कोछड (आजीवन सदस्य),*
*अखिल भारतीय खत्री महासभा,*
*मेन बाजार, मोगा (दिल्ली).*

*

## पू. बापू ने पिता-पुत्र के प्राणों की रक्षा की

हरिद्वार कुंभ के दौरान दिनांक : २५ से २८ अप्रैल तक पूज्य बापू के सान्निध्य में आयोजित शिविर में मैंने अपने परिवार के सभी सदस्यों सहित उपस्थित होकर सत्संग का लाभ लिया।

दिनांक : २७ अप्रैल को हम लोग प्रातःकाल हृषिकेश में लक्ष्मण झूला के निकट गंगाजी में स्नान करने लगे। इतने में मेरा सोलह वर्षीय पुत्र जितेन्द्र डूबने लगा और उसकी रक्षा के प्रयास में मैं भी उससे लिपटकर गोते खाने लगा। मृत्यु को आसन्न महसूस कर मैं आर्तभाव से पुकार उठा :

''गुरुदेव ! गुरुदेव !! रक्षा करो... रक्षा करो...''

इतना कहते ही मेरा पुत्र ऊपर उठने लगा, मानो उसे कोई खींच रहा हो और उधर मेरे हाथों में भी शक्ति का संचार होने लगा। अतः मैंने अपने पुत्र को नीचे से ऊपर की ओर जोर से धकेल दिया और हम दोनों बच गए।

वहाँ ड्यूटी पर तैनात कांस्टेबल ने बताया कि यह स्थान हर साल कई लोगों की जानें लेता है।

इसके बाद हम सभी सत्संग-मंडप में पहुँचे जहाँ अन्तर्यामी दयासिन्धु पूज्य गुरुदेव ने अपने प्रवचन के दौरान उपरोक्त घटना की तरफ इशारा करते हुए कहा कि जब दो आदमी एक साथ पानी में डूब रहे हों तो तीसरे आदमी को उनसे चिपकना नहीं चाहिए, दूर से ही धकेलकर उनकी जान बचा देनी चाहिए।

निःसन्देह यदि पूज्य बापू की कृपा नहीं होती तो हम दोनों डूब मरते। गुरुदेव के श्रीचरणों में मेरा और मेरे परिवार का कोटि-कोटि वंदन !

*- शंकर लाल*

*२९/१६ राजामंडी, छपैटी, आगरा (उ. प्र.).*

*

## अपानवायु मुद्रा का चमत्कार

जून, १९९८ की मध्यरात्रि की यह घटना है :

प्रायः मैं अपने मकान की ऊपरी मंजिल पर शयन करता हूँ। एक दिन रात्रि के लगभग १२ से १२-३० के बीच अचानक मेरी छाती में दर्द होने लगा, जिससे मेरी नींद उड़ गयी। मैं पसीने से तरबतर हो गया और खड़े होने का प्रयत्न किया किन्तु चक्कर आने की वजह से खड़ा भी न हो पाया।

घर के दूसरे सदस्य नीचे सो रहे थे। मेरी आवाज उन तक पहुँच सके, यह संभव भी नहीं था। अतः मैं मन-ही-मन पूज्यश्री का स्मरण करने लगा।

इतने में मुझे पूज्यश्री की कृपा से 'ऋषि प्रसाद' के ४९ वें अंक में दिया गया 'अपानवायु मुद्रा' का प्रयोग याद आ गया।

मैंने बिस्तर पर ही बैठकर 'अपानवायु मुद्रा' का प्रयोग शुरू कर दिया। आश्चर्य ! पाँच मिनट में ही पसीना आना बंद हो गया, चक्कर आना भी बंद हो गया एवं छाती का दर्द भी दूर हो गया। फिर पानी पीकर आराम से सो गया तो सुबह साढ़े तीन बजे उठा।

इस घटना के पश्चात् अब मैं रोज सुबह ३०-४० मिनट तक 'अपानवायु मुद्रा' का प्रयोग करता हूँ।

धन्य है पूज्य बापू की करुणामयी दृष्टि, जिसने मुझे हृदयाघात के भयंकर हमले से बचा लिया। पूज्य बापू के श्रीचरणों में मेरा कोटि-कोटि प्रणाम !

*- देवजीभाई हरिभाई पटेल*

*नयापुरा, संबलपुर (उड़ीसा).*

*

**बिलिया** : गुजरात में सिद्धपुर के निकट बिलिया गाँव में दिनांक : ३० अक्तूबर से १ नवम्बर तक तीन दिवसीय सत्संग समारोह का आयोजन हुआ, जिसमें बिलिया और आसपास के पचास-पचास गाँवों के लोगों ने इस 'मिनी कुंभ' में अवगाहन किया । पिछले सौ वर्षों में इतना जनसैलाब और इतना बड़ा आयोजन कभी नहीं हुआ था ऐसा बुजुर्गों का कहना है । सभी छोटी-मोटी संस्थाओं और उनके अगुओं ने सेवा और सत्संग का शुभ रसपान किया ।

आखिरी दिन सिद्धपुर, डीसा, पालनपुर और मेहसाणा जिला के पुण्यात्माओं ने आत्मा-परमात्मा को छूकर आनेवाली, इन अलख के औलिया की अमृतवाणी का पान किया ।

सिद्धपुर के निकट इस बिलिया गाँव को वहाँ से ३-४ कि. मी. आगे हाइवे तक दुल्हन की तरह सजाया गया था । इसकी विशेषता यह रही कि पूर्णाहुति के दिन प्रीति-भोज का आयोजन किया गया जिसमें सिद्धपुर, मेहसाणा, पालनपुर व आसपास से पधारे पुण्यात्माओं को शामिल किया गया । फिर भी इस विशाल भंडारे के बाद लड्डू बच गए तो दूसरे, तीसरे व चौथे दिन भी प्रसाद बँटता रहा ।

जहाँ सच्चाई व स्नेह होता है, वहाँ ऐसे सत्कार्य सुखपूर्वक संपन्न हो जाते हैं । मेहसाणा जिला व बिलिया के साधकों ने वर्षों से आश्रम बनाने की आज्ञा के लिए पूज्यश्री से प्रार्थना की थी, वे आज्ञा पाने में सफल हो गये । आश्रम बनाने की पिछले ५ वर्षों की उनकी प्रार्थना पूर्ण हुई । यह प्रार्थना पूर्ण करा दी श्री अमृतभाई साधक और उनके साथी साधकों ने ।

**अमदावाद** : दिनांक : ४ नवम्बर को सुबह ६ से ८ बजे तक अमदावाद आश्रम में पूनम व्रतधारियों के लिए दर्शन-सत्संग का कार्यक्रम हुआ । तत्पश्चात् पूज्यश्री वायुयान द्वारा दिल्ली पधारे ।

दिल्ली के लिए रवाना होने के पूर्व अल्प समय में हजारों पूनम व्रतधारी साधकों को संबोधित करते हुए योग वेदांत के अनुभवनिष्ठ ज्ञाता पूज्य बापू ने सारगर्भित सत्संग सुनाते हुए कहा :

**''आज के मनुष्य को जो ज्ञान है, वह अज्ञान में ज्ञान है । ऐसे ही सारी दुनियाँ का जो ज्ञान है, वह अपने आत्मा को जानने के सिवाय है । इसलिए उस ज्ञान में संशय रहता है और उस ज्ञान में पूरा आत्मसंतोष नहीं होता, आत्मशांति नहीं होती, आत्मतृप्ति नहीं होती । आत्मतृप्ति तो आत्मज्ञान व आत्मानुभव से ही होती है ।''**

**नई दिल्ली** : दिनांक : ४ से ८ नवम्बर तक हिन्दुस्तान की राजधानी नई दिल्ली स्थित राजा गार्डन मैदान में आयोजित 'चतुर्थ विश्वशांति सत्संग समारोह' के दौरान अनेक लोगों ने प्रेमरस पिलानेवाले, आत्मरस का आस्वादन करानेवाले, हरिरस की गंगा में सराबोर करानेवाले तथा मुरझाये हुए को मुस्कान देकर ऊपर उठानेवाले, प्राणिमात्र के परम हितैषी पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू के प्रत्यक्ष सान्निध्य का लाभ प्राप्त किया ।

दिल्ली व आसपास के पूनम व्रतधारियों को पूर्वनिर्धारित स्थल राजा गार्डन में पूज्यश्री के दर्शन हुए । सबको पूज्यश्री के दर्शन का लाभ भलीभाँति मिल सके, इस हेतु वहाँ की समिति ने एक ट्रॉली की व्यवस्था की थी जिस पर पूज्यश्री के शुभासीन होने हेतु एक सुन्दर मंच बना था । पूज्य बापूजी ने उस मंच पर विराजकर वहाँ एकत्रित एक लाख से अधिक भक्तों को दर्शन-प्रसाद का लाभ दिया । श्रोतागणों की अचल श्रद्धा-भक्ति को देखकर लोग

दंग रह गये।

दिनांक : ६ नवम्बर को विद्यार्थी युवक-युवतियों ने भी भारी संख्या में सत्संग में सम्मिलित होकर पूज्यश्री के वचनामृत को हृदयंगम किया।

शाम को सत्संग की पूर्णाहुति के समय सभी ने अश्रुभरी आँखों से बापूजी को भावभीनी विदाई दी।

**वाराणसी (काशी)** : भगवान शिव की आध्यात्मिक एवं मुक्तिदायिनी नगरी काशी स्थित महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ के मैदान में दिनांक : ११ से १५ नवम्बर तक पाँच दिवस के भव्य गीता-भागवत सत्संग समारोह का आयोजन किया गया।

सत्संग के प्रथम सत्र में विद्वान पंडितों ने वेदोक्त मंत्रोच्चार के साथ माल्यार्पण करके पूज्य बापूजी का भावपूर्ण स्वागत किया।

इस अनोखी विभूति के काशी आगमन से एवं हरिकथा के कार्यक्रम से जहाँ स्थानीय साधु, संत, महंत, तपस्वी, यति, योगी, विद्वान एवं भागवत-गीता-रामायण के मर्मज्ञ बेहद प्रसन्न थे, वहीं आसपास की भगवत्प्रेमी जनता इसे वरदान के रूप में स्वीकार कर रही थी।

इस पंच दिवसीय सत्संग समारोह में काशी के साधु-संतों-महात्माओं के अलावा स्थानीय एवं कई प्रांतों से आये हुए लाखों लोगों ने पूज्यश्री की पीयूषवाणी का रसपान किया।

दिनांक : १३ नवम्बर को पूज्यश्री ने विद्यार्थियों को तेजस्वी बनाने एवं स्मरणशक्ति, जीवनशक्ति और आत्मशक्ति बढ़ाने के लिए अनेक प्रयोग कराये।

ज्ञान-भक्ति व प्रेमरस का प्रसाद लुटाते हुए कुंडलिनी योग के आचार्य पूज्य बापू ने कहा :

**''प्रेम का बाप विश्वास है। विश्वास का मूल है सच्चाई। हमारे हृदय में एक दूसरे की भलाई के लिए जितनी ही सच्ची भावना होती है, उतना ही विश्वास पक्का होता है, उतना ही प्रेमरस प्रगट होता है।''**

**पटना** : बिहार की राजधानी पटना में दिनांक : १८ से २२ नवम्बर तक पूज्य गुरुदेव के सान्निध्य में विशाल सत्संग-समारोह का आयोजन हुआ। इस नगरी में भी प्रातः व सायंकालीन दोनों ही सत्रों में विराट जनमेदनी उपस्थित रही। यहाँ के अनेक बुद्धिजीवी श्रोताओं को यह कहते हुए सुना गया कि आज तक ऐसा सत्संग हमने कहीं सुना ही नहीं। विशाल पांडाल भी दूसरे दिन छोटा पड़ गया था।

सभामंडप की सजावट तो बिल्कुल निराली थी।

दिनांक : २० नवम्बर को हजारों विद्यार्थियों ने पूज्यश्री से गुरुकुल पद्धति के अनुसार यादशक्ति, तंदुरुस्ती, मन की प्रसन्नता व बुद्धि में समत्वयोग की प्राप्ति का प्रयोग पूज्यश्री के सान्निध्य में किया।

दिनांक : २१ नवम्बर को सुबह के सत्संग की पूर्णाहुति के बाद बिहार केन्द्रीय कारागार का वातावरण पूज्य बापू की उपस्थिति व 'हरि ॐ' के पवित्र उच्चारण से हरिमय बन गया था। कारागार के २१०० कैदियों को दिव्य सत्संग का लाभ मिला।

**जमशेदपुर (टाटानगर)** : बिहार की लोकनगरी टाटानगर के मैदान में दिनांक : २३ से २६ नवम्बर तक ज्ञान-भक्ति सत्संग समारोह का आयोजन हुआ, जिसमें ब्रह्मनिष्ठ पूज्य संत श्री बापूजी की अमृतवाणी का रसपान करने हेतु बिहार के कोने-कोने व देश के अनेक अन्य प्रान्तों से विशाल भक्त-समुदाय उमड़ पड़ा। जनता के लिए विशाल पांडाल बाँधा गया था फिर भी सत्संग के प्रथम दिन शाम की सभा में ही वह छोटा पड़ गया था। यह कार्यक्रम निर्धारित समय से चार दिन पूर्व ही आयोजित किया गया था फिर भी विशाल भीड़ के कारण मैदान छोटा पड़ गया।

जमशेदपुर के आसपास आदिवासी दरिद्रनारायणों की सेवा के लिए पूज्य बापू ने दस लाख रूपये भेंटस्वरूप अर्पित किये। दूसरे दिन उनके आवास व भोजन-व्यवस्था में आश्रमवासी व स्थानीय समिति के लोग जुट गये।

*

## शब्दब्रह्म का खेल : 3

### बायें से दायें

१. शिष्य को सद्गुरु के समक्ष..... से वर्तन करना चाहिए। (३)
३. बारह ज्योतिर्लिंगों में से एक। (५)
५. वह विद्या जिसके द्वारा पासे फेंककर शुभाशुभ फल जाना या बतलाया जाता है। (३)
६. सच्चा साधक मात्र ..... कहलाने के लिए नहीं अपितु धर्म के वास्तविक रहस्य को जानने की चेष्टा करता है। (३)
७. सदा रहनेवाला, शाश्वत। (४)
९. लाखों वर्षों की तपस्या से भी चित्त की दो क्षण की ..... ऊँची मानी गयी है। (३)
१०. चिंता..... के समान है। (२)
११. जागरण, यज्ञ। (२)
१२. शरीर के प्रमुख तीन दोषों में से एक। (२)
१३. साधना की एक अवस्था जिसमें साधक को भ्रान्ति हो जाती है कि उसे ज्ञान हो गया है। (२)
१४. व्यसन, बुरी आदत, कुटेव। (२)
१६. कुत्ते का भोजन, एक नरक का नाम जिसमें उन पापियों को डाला जाता है जो दूसरों के घर को आग लगाते हैं अथवा दूसरों को विष देकर मार डालते हैं। (६)
२१. चौदह लोकों में से एक लोक (२)
२२. कृष्णपक्ष (४)

### ऊपर से नीचे

१. श्री रामचंद्रजी ने शबरी को..... का उपदेश दिया। (५)
२. गुरुदेव साक्षात् ..... ब्रह्म हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं। (३)
३. एकलव्य ..... जाति का होते हुए भी गुरुभक्ति में श्रेष्ठ सिद्ध हुआ। (२)
४. पू. लीलाशाहजी बापू के कुलगुरु का नाम। (६)
७. सद्गुरु हमें ..... प्रदान करके सारे विकार और भरम मिटाते हैं। (४)
८. गुरु-शिष्य का ..... और सभी बंधनों से मुक्त कराता है। (२)
१०. प्रेमावतार भगवान श्रीकृष्ण गोपियों का ..... चुराकर उन्हें भक्तिमार्ग में प्रविष्ट कराते थे। (२)
११. गुरुकृपा साधक को माया ..... से छुड़ाती है। (२)
१२. प्यास, पीने की इच्छा, तृषा। (३)
१३. वेदान्त के अनुसार जीव की वह अंतिम अवस्था जो मोक्ष है। (३)
१५. तुलसी साथी विपत्ति के, विद्या..... विवेक। (३)
१७. तल्लीन, निमग्न। (२)
१८. भक्ति, योग और ज्ञान का सद्गुरु करते ..... (२)
१९. साधक को व्यवहार में ..... रहना चाहिए। (२)
२०. भगवान अपने भक्तों का ..... लेते हैं। (२)

*

### शब्दब्रह्म के खेल : 2 का उत्तर

| | | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| वि | वे | का | नं | द | ॐ | अ | च | ल |
| रो | ॐ | ग | ॐ | शा | ॐ | ज | ॐ | धि |
| च | ॐ | भु | ॐ | न | ॐ | ॐ | उ | मा |
| न | ॐ | शु | ॐ | न | ॐ | निं | दा | ॐ |
| ॐ | शां | डि | ली | ॐ | अ | द | र | क |
| य | ति | ॐ | ॐ | कुं | भ | क | ॐ | र्णा |
| क्ष | ॐ | ॐ | उ | द | य | ॐ | ज | व |
| ॐ | ब | लि | दा | न | ॐ | च | ल | ती |
| प् | ल | ॐ | सी | ॐ | न | र | ॐ | ॐ |

## 28 से 30 दिसम्बर '98 सूरत आश्रम में विद्यार्थी तेजस्वी तालीम शिविर में

## पूज्य बापू देश के विद्यार्थियों के साथ

**हे भारत के सुज्ञ नागरिक !**

* क्या आप अपने पुत्र-पुत्री को तेजस्वी बनाना चाहते हैं ?

* क्या आप अपने पुत्र-पुत्री का शरीर स्वस्थ, मन प्रसन्न व बुद्धि को प्रबल बनाना चाहते हैं ?

* क्या आप इस स्पर्धा के युग में अपने लाडलों को अपने पैरों पर खड़ा देखना चाहते हैं ?

* आज का विद्यार्थी कल का नागरिक है । आगे चलकर उसे ही परिवार, कुल-खानदान तथा देश की बागडोर संभालनी है । क्या आप अभी से उसके कंधे मजबूत करने हेतु व्यवस्था कर रहे हैं ?

* क्या आपके संतान कुसंग या बुरी लतों से परेशान हैं ?

**हे भारत के भावी कर्णधार विद्यार्थी !**

* क्या याददाश्त की कमी, आँख में चश्मा अथवा अन्य किसी कारण से आपको अध्ययन में अवरोध होता है ?

* क्या आप देश के उच्च व प्रतिष्ठित पदों पर आसीन होना चाहते हैं ?

* क्या आप अपनी सुषुप्त शक्तियों को जगाकर

उन्नति का मार्ग प्रशस्त करना चाहते हैं ?

❊ क्या आपके जीवन का लक्ष्य 'कुछ करना' या 'कुछ बनना' है ?

...तो याद रखें :

ब्रह्मनिष्ठ, योगीराज, अनेक गुह्यतम योगों के ज्ञाता, शक्तिपात-वर्षा के समर्थ आचार्य, राष्ट्रसंत पूज्यपाद श्री आसारामजी बापू के पावन सान्निध्य व प्रेरक मार्गदर्शन में हर वर्ष की भाँति इस वर्ष भी समिति द्वारा दिनांक : २८ से ३० दिसम्बर '९८ के दौरान सूरत में तापी नदी के तट पर स्थित पवित्र आश्रम में राष्ट्रस्तरीय **'विशाल विद्यार्थी तेजस्वी तालीम शिविर'** का आयोजन किया गया है। इसमें योगविद्या के अनुभवनिष्ठ ज्ञाता पूज्य बापूजी शक्तिपात-वर्षा के द्वारा देश के विद्यार्थियों को उन्नत करेंगे तथा शारीरिक, बौद्धिक एवं आध्यात्मिक विकास हेतु अनेक यौगिक प्रयोग व **मार्गदर्शन प्रदान** करेंगे। ऐसे शिविर में प्रतिवर्ष देश-विदेश के **लाखों विद्यार्थी** लाभान्वित होते हैं। शरीर स्वस्थ, मन प्रसन्न ... बुद्धि **तेजस्वी** बनाकर तथा जीवन जीने की दुर्लभ कुंजियाँ पाकर वे धन्यता का अनुभव करते हैं।

सर्वांगीण विकास व प्रगति के इच्छुक विद्यार्थियों को आह्वान किया जाता है कि वे इस योग शक्तिपात-वर्षा व तेजस्वी तालीम शिविर का पूरा लाभ उठावें तथा योगसंपन्न पूज्य बापू द्वारा प्राप्त योग का प्रयोग करके अपनी उन्नति का मार्ग प्रशस्त करें।

❊

## *पूज्य बापू के अन्य सत्संग-कार्यक्रम*

| दिनांक | शहर | कार्यक्रम | समय | स्थान | संपर्क फोन |
|---|---|---|---|---|---|
| ४ से ६ दिसम्बर '९८ | रायपुर (म.प्र.) | सत्संग समारोह | सुबह ९-३० से १२<br>शाम ३ से ५ | स्पोर्ट्स ग्राउन्ड, बूढ़ा तालाब। | ५३६३५६, २२६७३०, ५२३६०८, ५२६७१०, ५३९९५०, ५२८३५५. |
| ७ से ९ दिसम्बर '९८ | बिलासपुर (म. प्र.) | सत्संग समारोह | सुबह ९-३० से ११-३०<br>शाम ३ से ५ | व्यापार विहार, त्रिवेणी परिसर। | २६७९४, २५५४०, २४६१२, ४१९७३, ४६९८१. |
| ११ से १३ दिसम्बर '९८<br>१२ दिसम्बर | अम्बिकापुर (म. प्र.) | सत्संग समारोह<br>विद्यार्थियों के लिए | सुबह ९-३० से ११-३०<br>शाम ३ से ५<br>सुबह ९-३० से ११-३० | आर. टी. ओ. ऑफिस के पास, मनेन्द्रगढ़ रोड। | (०७७७४) २०३३१, २३२३६, २०६३३, २०३७१. |
| १५ से १७ दिसम्बर '९८ | दमोह (म. प्र.) | सत्संग समारोह | सुबह ९-३० से ११-३०<br>शाम ३ से ५ | गवर्नमैंट स्कूल। | (०७८१२) ३१७००, ३२२१०, २२९८४. |
| १८ से २० दिसम्बर '९८ | भोपाल | शिविर | - | संत श्री आसारामजी आश्रम, बायपास रोड, गाँधीनगर, भोपाल। | ५२१७७५, ५२३३००. |
| २५ से २७ दिसम्बर '९८<br>२८ से ३० | सूरत आश्रम | शिविर<br>विद्यार्थी शिविर | - | संत श्री आसारामजी आश्रम, जहाँगीरपुरा, वरियाव रोड, सूरत। | ६८५३४१, ६८७९३६. |
| ३० दिसम्बर '९८ से १ जनवरी '९९ | भरूच | सत्संग समारोह<br>प्रथम तीन सत्संग श्री सुरेशानंदजी द्वारा | सुबह ९-३० से ११-३०<br>शाम ३ से ५ | जे. पी. सायन्स ऐण्ड आर्ट्स कॉलेज ग्राउन्ड, रेलवे स्टेशन के पीछे। | (०२६४२) ४५६७८ |
| ६ से १० जनवरी '९९ | पादरा (जि. वडोदरा) | सत्संग समारोह | सुबह ९-३० से ११-३०<br>शाम ३ से ५ | गोकुलधाम, सीताराम पार्क के सामने, सरदार पटेल मार्केट, ताजपुरा रोड, पादरा। | (०२६६२) २३०४३, २२८२५. |
| १४ से १७ जनवरी '९९ | अमदावाद आश्रम | उत्तरायण शिविर | - | संत श्री आसारामजी आश्रम, साबरमती, अमदावाद-५. | (०७९) ७५०५०१०, ७५०५०११ |

**पूर्णिमा दर्शन : १ जनवरी '९९ भरूच में।**

**हम बालक हैं तो क्या हुआ, उत्साही हैं हम वीर हैं। हम नन्हें-मुन्ने बच्चे ही, इस देश की तकदीर हैं॥**

पटना में हजारों बच्चे-बच्चियों को स्मृतिशक्ति बढ़ाने का प्रयोग कराते हुए पूज्य बापूजी।

**संतसमागम हरिकथा, भजन-कीर्तन अरु ध्यान। गुरुदेव के श्रीचरणों में, मिले आतमज्ञान॥**

पटना की विराट गीता-भागवत सत्संग सभा में पूज्यश्री से लाभान्वित हो रही धर्मप्रेमी जनता।

पटना में संत श्री आसारामजी बापू की विभिन्न झाँकियाँ लगाकर, बैंड-बाजों के साथ बड़ी धूम-धाम से निकाली हुई संकीर्तन यात्रा की झलक।

बिहार के सरल स्वभाव महामहिम राज्यपाल श्री सुंदरसिंह भंडारीजी पूज्यश्री के श्रीचरणों में सत्संग का श्रवण करते हुए।

REGISTERED WITH R.N.I. UNDER NO. 48873/91 LICENSED TO POST W/O PRE-PAYMENT : AHMEDABAD PSO LICENCE NO.